INDIAN INSTITUTE OF TECHNOLOGY KANPUR

अंतस्

अर्धवार्षिक पत्रिका, वर्ष 2013, अंक-4

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

परिसर के झरोखे से

सादर अनुरोध

1. अंतस् के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अपनी रचनाएं शीघ्रातिशीघ्र भेजने का कष्ट करें।
2. रचनाएं यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम, पद एवं पता का उल्लेख अपेक्षित है।
3. रचना की विषय-वस्तु प्रौद्योगिकी, विज्ञान अथवा मानविकी विषयों पर आधारित होनी चाहिए।
4. आवश्यकतानुसार लेखों में शामिल छाया-चित्र, आंकड़ों से संबंधित आरेख स्पष्ट होंने चाहिए।
5. प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुपाच्य हिंदी भाषा हो।
6. अनूदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क कर सकते हैं।
7. लेख मौलिक एवं यथासंभव अप्रकाशित होने चाहिए।

स-आभार
संपादन मंडल

नोट-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, तार्किकता एवं सत्यता हेतु लेखकगण उत्तरदायी हैं।

संकेतक

संदेश–निदेशक 1
उपनिदेशक 2
संपादक 3

विशेष – दीक्षान्त समारोह 4

गुरुदक्षिणा–श्री जीत बिंद्रा 7

रुबरु– प्रोफेसर मणीन्द्र अग्रवाल 10

साहित्ययात्रा–

1. मित्रता 14
2. मेरी ओर भी देखो 16
3. गज़ल 17
4. हार कर भी जीत (कविता) 17
5. हकीकत 18
6. अपने सिक्के (कविता) 19
7. उलाहना (कविता) 20
8. क्या आज मैं शिक्षित हुआ? 20
9. मै, आपका मनभावन 21
10. महिला दिवस 22
11. इस देश के लिए (कविता) 26
12. मेघ (कविता) 27
13. आत्ममंथन 28
14. गाँव की याद (कविता) 29
15. जब मैं था तब हरि नहीं 30
16. हिन्दी साहित्य सभा : क्यों एवं क्या? 31
17. उम्मीद (कविता) 33
18. आस्था के सन्दर्भ में वैज्ञानिक तर्क कितने सुसंगत? 44
19. आलू महिमा (कविता) 46

सरोकार

एक विश्लेषण 23

बौछार

शिक्षा, परीक्षा और शौचालय.... 32

भाषा–विमर्श

अलंकार 34
राजभाषा 36

बालबत्तीसी

कर्तव्य पालन 39

तकनीकी लेख

नाभिकीय ऊर्जा संरक्षा में नियामकता का महत्व 41

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ 47

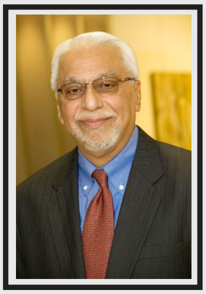

अंतस् परिवार

संरक्षक
प्रोफेसर इन्द्रनील मान्ना
निदेशक

परामर्शदाता
प्रोफेसर सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव
उपनिदेशक

मुख्य संपादक
प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

संपादक
डॉ. वेदप्रकाश सिंह

संपादन-सहयोग
प्रोफेसर समीर खांडेकर
प्रोफेसर सर्वेश चन्द्रा
प्रोफेसर हरीशचन्द्र वर्मा
प्रोफेसर शिखा दीक्षित
डॉ. ओमप्रकाश मिश्र

अभिकल्प
सुनीता सिंह

वर्तनीशोधन
श्री विष्णु प्रसाद गुप्ता
श्री जगदीश प्रसाद
श्री भारत देशमुख

छायाचित्र
श्री रवि शुक्ल

सहयोग
विद्यार्थी हिंदी साहित्य सभा

निदेशक की कलम से...

अनादि काल से समाज के हर तबके में ये चर्चा का विषय होता है कि जीवन क्या है या उसे कैसा होना चाहिए अथवा मनुष्य के जीवन में तो कम से कम अन्य प्राणियों की तुलना में कुछ विशेषता होनी चाहिए आदि? इसी सोच को साकार रूप देने के लिए प्रत्येक देश में शिक्षण और शिक्षण-प्रणाली के स्वरूप का निर्धारण किया जाता है। वस्तुत: वैदिक काल से चली आ रही यह अवधारणा कि ''यज्ञ द्वारा समाज और शिक्षा द्वारा व्यक्ति का संस्कार पुष्ट होता है।'' आज भी उतनी ही प्रामाणिक है जितनी कि प्राचीन काल में थी। स्पष्ट है कि सभ्य समाज और संस्कारित एवं सुयोग्य व्यक्तियों के गवेषणा-पूर्ण विचारों से हम साहित्य के माध्यम से ही रूबरू होते हैं।

अच्छा और सच्चा साहित्य ही चित्त को रूढ़ और निर्जीव परम्पराओं से मुक्त कर नए संदर्भ में ग्रहण करने की शक्ति को प्रबुद्ध बनाता है। संस्थान का राजभाषा प्रकोष्ठ भी "अंतस्" साहित्यिक पत्रिका के माध्यम से इस परियोजना में सन्नद्ध है यह हम सभी के लिए प्रसन्नता का विषय है।

"अंतस्" का चतुर्थ अंक प्रकाशित हो रहा है। सभी रचनाकारों एवं संपादन मंडल को पत्रिका के सफल प्रकाशन की बहुत-बहुत बधाई। आग्रह करता हूँ कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के सभी सदस्य एवं परिसरवासी अपनी सुरुचिपूर्ण रचनाओं से पत्रिका को समृद्ध कर एक आदर्श साहित्यिक पत्रिका बनाएँ।

शुभकामनाओं सहित,

इ. मान्ना

इंद्रनील मान्ना
निदेशक

उपनिदेशक की दृष्टि में....

आज हम परिवर्तन के उस मोड़ पर खड़े हैं जहाँ हम जीवन और समाज के सभी घटकों में आर्थिक और वैज्ञानिक विकास के प्रति कृतसंकल्प हैं। हम एक ऐसे समाज की संरचना में संलग्न हैं जो किसी भी प्रकार की विसंगति से परे हो और सभी को अपना अभीष्ट साकार करने के समान अवसर प्राप्त हों। जाहिर है कि इसके लिए बहुत बड़े स्तर पर विचारगत क्रांति की आवश्यकता है। कहने की जरूरत नहीं है कि भाषा और साहित्य ही अभिव्यक्ति का वह सशक्त माध्यम है जिससे विचार और संवेदनाएं मूर्त रूप में संप्रेषित होकर व्यक्ति और समाज को जोड़ती हैं।

मुझे प्रसन्नता है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा प्रकाशित "अंतस्" साहित्यिक पत्रिका, राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार के उत्तरदायित्व को न केवल ही भली भाँति निभा रही है बल्कि अपनी प्रभावशाली रचनात्मक संप्रेषणीयता से सभी को जोड़ने का अनूठा प्रयास भी कर रही है।

पत्रिका का चतुर्थ अंक आपके हाथ में है। निश्चित रूप से यह हमारे लिए खुशी की बात है। गुणावगुण और उपयोगिता के आधार पर आपकी प्रतिक्रिया की हमें प्रतीक्षा रहेगी। संपादन मंडल के सभी सदस्यों, रचनाकारों और पाठकों को बहुत-बहुत बधाई।

शुभकामनाओं सहित,

सुरेश श्रीवास्तव
सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव
उपनिदेशक

अपनी गलती को स्वीकारना झाड़ू लगाने के समान है जो सतह को चमकदार और साफ कर देती है।

महात्मा गाँधी ...

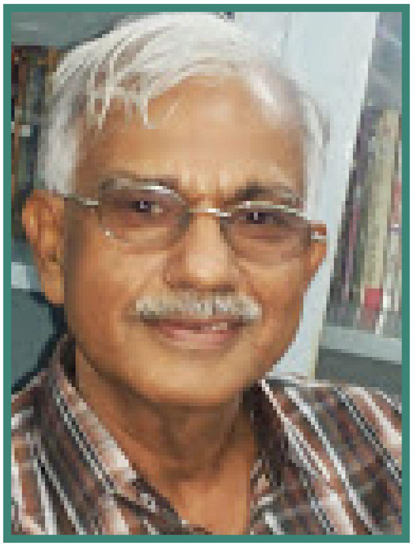

प्रिय पाठक,

आज स्वतंत्रता दिवस है। “अंतस्” के चतुर्थ अंक को आज आपको समर्पित करते हुए राजभाषा प्रकोष्ठ गर्वान्वित महसूस कर रहा है और आपको स्वतंत्रता दिवस की अनेकानेक बधाईयाँ भी दे रहा है। “अंतस्” पत्रिका दीर्घायु होगी और अपनी मातृभाषा में आपके स्वतः स्फूर्त लेखन को प्रकाशित और परिमार्जित करती रहेगी।

आज का दिन आत्मनिरीक्षण का भी है। स्वतंत्रता का स्वप्न प्रकट करते हुए महात्मा गाँधी ने तीन बातें हमारे समक्ष रखी थीं – (1) वकील और नाई दोनों के कार्य का मूल्य समान है, (2) किसान और मजदूर का जीवन ही सच्चा जीवन है और (3) सबकी भलाई में ही अपनी भलाई है। अब आप ही मूल्यांकन कीजिये कि स्वतंत्रता के बाद हम किस सीमा तक ऐसा देश बना पाये हैं। उत्तराखंड की त्रासदी के बाद गाँधी के विचार केवल श्रद्धा व्यक्त करने तक सीमित नही हैं। उत्तराखंड की जून की घटनाओं ने इस तथ्य को वैज्ञानिक बनाकर रख दिया है कि स्वतंत्रता ही जीवन है। पश्चिमी विचारों और पश्चिमी भोगों के वशीकरण और स्वराज को भुलाने के क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं, वह सामने है। भारत की भुरभुरी जमीन को वैश्वीकरण की मार से कैसे बचाया जाये, थोड़ा सोचें।

मुझे प्रसन्नता है कि “अंतस्” के माध्यम से परिसर की लेखन प्रतिभायें चिह्नित हो रही हैं। इन प्रतिभाओं और राजभाषा प्रकोष्ठ के प्रोत्साहन के लिए कृपया अपनी प्रतिक्रियाएं दें।

आपका अपना

अरुण कुमार शर्मा

अरुण कुमार शर्मा

प्रधान संपादक

अंक विशेष

दीक्षान्त समारोह

प्राचीन काल से ही भारत देश परंपराओं का देश रहा है। भारतवासियों की दूरदृष्टि परंपराओं के मूल में अवलंबित रही है। भारत में विद्यमान गुरू-शिष्य परम्परा का विश्वभर में आज भी बखान किया जाता है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर इस परम्परा का अनुगमन करते हुए अपने विद्यार्थियों को विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में विशिष्ट शिक्षा प्रदान कर रहा है। प्रबुद्ध संकाय सदस्यों के सानिध्य में संस्थान के विद्यार्थी दृढ़ संकल्प, कड़ी मेहनत एवं धैर्य के साथ अपने जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में पूरे मनोयोग से जुटे रहते हैं। अध्ययन-काल की समाप्ति पर संस्थान इन विद्यार्थियों को दीक्षान्त समारोह के अवसर पर उपाधियाँ प्रदान करता है। शिक्षा-दीक्षा की इस परंपरा को अक्षुण्ण रखते हुए संस्थान ने दिनांक 5 जुलाई, 2013 को अपने 45 वें दीक्षान्त समारोह का भव्य आयोजन किया। दीक्षान्त समारोह में उपाधि प्राप्त करने के पश्चात विद्यार्थी प्रसन्नचित मुद्रा में दिखाई पड़े और उन्होंने अपने सह-पाठियों एवं अभिभावकों के साथ इस क्षण का भरपूर आनंद उठाते हुए टोपियाँ उछाल-उछाल कर अपनी ख़ुशी का इज़हार किया। एक तरफ जहाँ विद्यार्थियों में अपने नये गंतव्य की ओर प्रस्थान करने का उत्साह नजर आ रहा था, वहीं दूसरी ओर उनमें अपने सह-पाठियों से बिछुड़ने का गम भी स्पष्ट रूप से नजर आ रहा था।

इस दीक्षान्त समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में भारत के राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी ने विद्यार्थियों और संकाय-सदस्यों को संबोधित किया तथा विशेष योग्यता से उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों को पदक प्रदान किया। दीक्षान्त समारोह में कुल 1387 {359 बी.टेक, 138 बी.टेक-एम.टेक [दोहरी उपाधि,] 76 एम.एस-सी. इंटीग्रेटेड, 118 एम.एस-सी (दो वर्षीय), 48 एम.बी.ए, 33 वी.एल.एफ.एम, 12 एम.डेस, 411 एम.टेक एवं 132 पी-एचडी} विद्यार्थियों को उपाधियाँ प्रदान की गईं, जिनमें 99 छात्राएँ एवं 1228 छात्र शामिल हैं। समारोह में देश-भर से लब्धप्रतिष्ठ शिक्षाविद, वैज्ञानिक, समाज-सेवी तथा विद्यार्थियों के अभिभावकगण पहुँचे। इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के राज्यपाल माननीय बी.एल. जोशी ने सम्माननीय अतिथि के रूप में समारोह की गरिमा बढ़ाई । दीक्षान्त भाषण श्री प्रणब मुखर्जी ने दिया जबकि कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के संचालक मण्डल के अध्यक्ष प्रो. मु. आनंदकृष्णन ने की। संस्थान के निदेशक प्रोफेसर इंद्रनील मान्ना ने संस्थान का प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए जानकारी दी कि शोध एवं शिक्षण कार्यों में और अधिक गति लाने के लिए गत वर्ष के दौरान 110 विभिन्न प्रायोजित एवं शोध-संस्थानों के साथ सहमति ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किये गये हैं। इसके अतिरिक्त 15 विश्वविद्यालयों एवं शैक्षणिक संस्थानों के साथ भी सहमति ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किये गये हैं। संस्थान के संकाय-सदस्यों द्वारा 12 तकनीकों का विकास किया गया है जिनके व्यावसायीकरण के लिए लाइसेंस भी प्राप्त हो गया है, साथ ही साथ 18 पेटेंट (अधिकार पत्रों) को भी दर्ज कराया गया है जिसके फलस्वरूप बौद्धिक संपदा के रूप में संस्थान को 86,400 डॉलर की आय हुई है। बाहर से प्रायोजित की जा रही वर्तमान परियोजनाओं की संख्या 588 है जिनकी कुल लागत 314 करोड़ रुपये है। इसके अतिरिक्त वर्ष के दौरान विभिन्न एजेंसियों द्वारा कतिपय अनुदान भी स्वीकृत किये गये हैं जिनमें प्रमुखत: विभिन्न विभागों द्वारा स्वीकृत अनुदान राशि है:- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग 7 करोड़, एसईआरबी 7 करोड़, एआरडीबी 4 करोड़, डीआरडीओ 6 करोड़ तथा डीएई द्वारा 2 करोड़ की राशि अनुदान के रूप में स्वीकृत की गई है। स्वर्गीय प्रोफेसर राजीव मोटवानी की पत्नी सुश्री आशा जडेजा ने संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग के अंतर्गत राजीव मोटवानी भवन के निर्माण के लिए संस्थान को 181,000 अमेरिकी डॉलर दान स्वरूप भेंट किये हैं । निदेशक महोदय ने बताया कि संकाय-सदस्यों एवं विद्यार्थियों को मिलने वाले पुरस्कार एवं सम्मान हमेशा ही संस्थान को गौरवान्वित एवं प्रेरित करते हैं। संस्थान-समुदाय ने अपने आप को उस समय अत्यन्त गौरवान्वित महसूस किया जब भारत सरकार ने संस्थान के पूर्व निदेशक प्रोफेसर संजय गो. धांडे, प्रोफेसर अशोक सेन को एवं प्रोफेसर मणींद्र अग्रवाल को पद्मश्री की उपाधि प्रदान कर सम्मानित किया । उन्होंने बताया कि वर्ष 2007 की मंदी के उपरान्त तथा दूसरी मंदी के भय के बावजूद देश-विदेश की तमाम कंपनियों ने संस्थान के छात्रों के नियोजन के लिए संस्थान में दस्तक दी है। इस वर्ष नियोजन के लिए 914 विद्यार्थियों को पंजीकृत किया गया था जिनमें से 709 विद्यार्थियों को 200 कंपनियों से रोजगार के प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं। संस्थान में अतिथियों, अतिथि संकायों एवं देशी-विदेशी विद्यार्थियों के आवागमन के साथ-साथ परिसरवासियों की परिवहन की सुविधा को बढ़ाते हुए संस्थान-प्रशासन ने संस्थान से लखनऊ के अमौसी हवाई अडडे के बीच हेलीकॉप्टर सेवा भी प्रारंभ कर दी है । इस सुविधा को फिलहाल प्रायोगिक तौर पर प्रारंभ किया गया है परन्तु भविष्य में

इसके स्थायी होने की प्रबल संभावना है । संस्थान को विश्वस्तरीय पहचान दिलाने के लिए संस्थान अगले कुछ वर्षों के दौरान संकाय-सदस्यों, शोध-अभियंताओं एवं वैज्ञानिकों की संख्या बढ़ाने तथा अवसंरचनात्मक सुविधाओं में गुणात्मक वृद्धि करने के लिए एक विशेष अभियान प्रारंभ कर चुका है।

दीक्षांत समारोह में बतौर मुख्य अतिथि श्री प्रणव मुखर्जी ने विद्यार्थियों को अपना आशीर्वचन देते हुए कहा कि वे आत्मचिंतन करें तथा अपने गुरूजनों से जो शिक्षा ग्रहण की है, उसे हमेशा याद रखें अर्थात् सम्मान का भाव, सहानुभूति, सहनशीलता, कर्तव्यनिष्ठा, विनम्रता, अनुशासन और उत्तरदायित्व को जिंदगी में कभी न भूलें। साथ ही विद्यार्थियों का आह्वान किया कि वे अपने शोध से ऐसी नई-नई तकनीकें खोजें जिससे समाज एवं देश को उसका प्रत्यक्ष लाभ मिल सके। श्री मुखर्जी ने शोध-कार्यों में निजी क्षेत्र की महती भूमिका को रेखांकित करते हुए संस्थान के संकाय-सदस्यों को अधिकाधिक मौलिक शोध-कार्य करने के लिए प्रेरित किया ।

इस अवसर पर अलग-अलग पाठ्यक्रम में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले निम्नवर्णित छात्र-छात्राओं को पदक (मेडल्स) से अलंकृत किया गया ।

राष्ट्रपति स्वर्ण पदक
शुभम तुलस्यानी (संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी)

निदेशक स्वर्ण पदक
शुभम तुलस्यानी (संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी)

रतन स्वरूप मैमोरियल पुरस्कार
पंकज सक्सेना (रासायनिक अभियांत्रिकी)

डॉ. शंकर दयाल शर्मा पदक
कार्तिक के एन (वांतरिक्ष अभियांत्रिकी)

कैडेन्स स्वर्ण पदक
तन्मय चटर्जी (यांत्रिक अभियांत्रिकी)

विभिन्न पाठ्यक्रमों में कुल मिलाकर 87 छात्र/छात्राओं को पदक प्रदान किया। विद्युत अभियांत्रिकी विभाग के प्राध्यापक डॉ. आदित्य के जगन्नाथन को "गोपाल दास भंडारी प्रतिष्ठित स्मारक शिक्षक अवार्ड" प्रदान कर विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

पूरा सभागार हर्षातिरेक में उस समय तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा जब संस्थान के दो पूर्व छात्रों-श्री एन. आर. नारायणमूर्ति एवं प्रोफेसर अशोक सेन को समाज के प्रति उनके उल्लेखनीय योगदान एवं उपलब्धियों के लिए उन्हें 'डॉक्टर ऑफ साइंस' की मानद उपाधियों से अलंकृत किया गया। ज्ञात हो कि श्री नारायण मूर्ति ने सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत को विश्व स्तरीय पहचान दिलाई है जबकि प्रोफेसर सेन ने भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में अपना लोहा मनवाया है। श्री मूर्ति ने सफलता का मंत्र देते हुए विद्यार्थियों का आह्वान किया कि उद्यमिता की ओर कदम रखने वाले युवाओं में धैर्य और आत्मविश्वास होना चाहिए साथ ही उन्हें टीम का चयन भी सावधानी पूर्वक करनी चाहिए । नये-नये विचार ही आगे बढ़ने में मदद करते हैं, जब विचार अच्छे होंगे तो व्यवसाय में सफलता के अवसर भी अधिक मिलेंगे । उन्होंने अपने विचारों के माध्यम से विद्यार्थियों को संदेश दिया कि जिंदगी की डगर कठिन जरूर है परन्तु इसमें असंभव कुछ भी नहीं है।

प्रोफेसर सेन ने विद्यार्थियों को बधाई देते हुए बताया कि यह तय करना विद्यार्थियों का कार्य है कि उनका लक्ष्य क्या है? उन्होंने कहा कि विज्ञान के क्षेत्र में कैरियर बनाना अच्छा है। विज्ञान में पैसा तो कम है लेकिन काम करने की आजादी है। साथ ही उन्होंने विद्यार्थियों को यह सुझाव भी दिया कि अगर अपनी पसंद को ही कैरियर बनायें तो जिंदगी में ज्यादा सफलता हासिल की जा सकती है।

संस्थान के निदेशक प्रोफेसर इन्द्रनील मान्ना ने उपाधि प्राप्त करने वाले समस्त छात्र/छात्राओं को शपथ दिलाई तथा उनका आह्वान किया कि वे अपने शोध, संकल्प एवं उत्साह से समाज में परिवर्तन ला सकते हैं। उन्होंने विद्यार्थियों के अभिभावकों का भी शुक्रिया अदा किया जिन्होंने अपने बच्चों को यहाँ तक पहुँचाने में अपना श्रेष्ठ योगदान दिया है । निदेशक महोदय ने विद्यार्थियों से कहा कि आप में से हर-एक ने संस्थान की भावना को अंगीकृत किया है जिसमें प्रतिबद्धता, उत्कृष्टता, साहचर्य और सबसे महत्वपूर्ण सेवा का भाव अन्तर्निहित है। आप लोग इस भावना को भविष्य में भी कायम रखें। यह बात मायने नहीं रखती कि आप कहाँ पर हैं जहां भी हैं सपने देखना ना छोड़ें, बड़े से बड़ा सपना देखें क्योंकि सपने ही एक दिन साकार होकर व्यक्ति और देश को प्रगति की राह पर आगे ले जाते हैं।

राजभाषा प्रकोष्ठ

45वें दीक्षांत-समारोह की झलकियाँ

45वाँ दीक्षान्त समारोह
EXIT
NO SMOKING
EXIT
NO SMOKING
B.TECH

गुरुदक्षिणा

श्री जीत बिंद्रा

“येन: पितु: पितरो ये पितामहास्तेभ्यः पितृभ्यो: नमसा विधेम॥”

जिस प्रकार से मातृदेवो भव, पितृदेवो भव की परम्परा हमें सांस्कृतिक विरासत में प्राप्त हुई है उसी प्रकार से गुरुदक्षिणा की परम्परा भी हमारे भारत की विश्वव्यापी सांस्कृतिक विरासत का एक अटूट हिस्सा है। वैदिक संहिताओं में, आचार्यों द्वारा प्रणीत नीति-ग्रंथों में जहाँ ‘नमो मात्रे पृथिव्यै’, ‘माता भूमि:’ व ‘पुत्रोहंपृथ्वीव्या:’ जैसे शब्दों में माता की वंदना की गई है वैसे ही महाकवि तुलसीदास जी ने “तात तुम्हार मातु वैदेही। पिता राम सब भाँति सनेही॥” लिखकर पितृदेवो भव: की सांस्कृतिक परम्परा को अक्षुण्ण रखा है। ठीक इसी प्रकार से “गुरूर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरुर्देवो महेश्वर:। गुरु: साक्षात्परंब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।” भारतीय संस्कृति की वह सनातनी विरासत है जो मनसा, वाचा, कर्मणा तीनों से अभिसिंचित होकर देशकाल, परंपरा व परिवर्तन सभी को समाहित करती हुई अभिच्छिन्न भाव से आधुनिक युग में भी संपादित होती हुई चली आ रही है और यही भारतीय सभ्यता का मूल और अपरिवर्तित रूप है। इतिहास साक्षी है कि गुरुदक्षिणा की परंपरा के निहितार्थ में जीवन जीकर कितने ही शिष्यों ने गुरु-शिष्य परंपरा को केवल अनुकरणीय ही नहीं बनाया है अपितु उसे आलोक प्रदान करते हुए अमरत्व की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर आधुनिक भारतीय शिक्षा-प्रणाली का वह आश्रम है जिसकी यूँ तो स्थापना अमेरिकन पद्धति पर हुई है परन्तु इसके पुष्पित और पल्लवित होने का आधार भारतीय संस्कृति और परम्परा ही रही है और वस्तुत: यही कारण है कि यहाँ के विद्यार्थी आज पूरे विश्व में अपने परिश्रम एवं ज्ञान की बदौलत बड़े-बड़े व्यापारिक प्रतिष्ठानों के न केवल मुखिया हैं बल्कि अपने अभिनव अन्वेषण और कार्यान्वयन प्रतिभा से वे भारत का परचम ऊँचा किये हुए हैं।

“अंतस्” पत्रिका के प्रथम अंक से ही हमारा यह गंभीर प्रयास रहा है कि पत्रिका के स्थायी स्तम्भ “गुरुदक्षिणा” के माध्यम से हम पाठकों का संस्थान के उन प्रतिभाशाली पूर्व छात्रों से तआर्रुफ करवाएँ जिन्होंने शिक्षोपरांत अपनी गाढ़ी कमाई का कुछ हिस्सा “गुरुदक्षिणा” के रूप में संस्थान को अर्पित कर अपने गुरुकुल को मात्र सजाया एवं सँवारा ही नहीं है बल्कि शिक्षण-प्रशिक्षण को अभिनव आयाम देते हुए शोध और अन्वेषण के लिए ठोस आधार भी प्रदान किया है; और कहना न होगा कि उन विद्यार्थियों में श्री जीत बिंद्रा जी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इस बार हम आपको उन्हीं जीत बिंद्रा जी से मिलवाते हैं जिन्होंने इस संस्थान से 1969 में रासायनिक अभियांत्रिकी में बी. टेक. की उपाधि प्राप्त की थी।

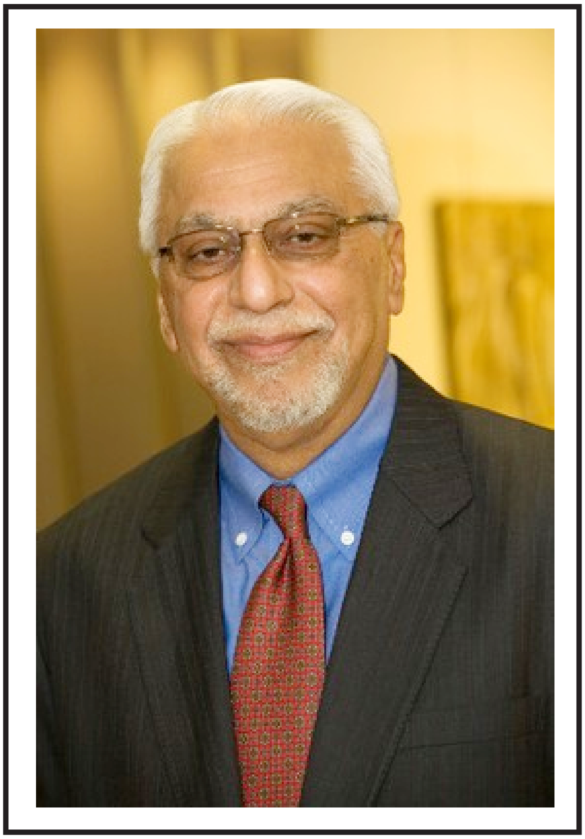

बताते चलें कि श्री जीत बिन्द्रा ने एक जगह अपने जीवन परिचय में लिखा है कि “My family was poor, but I never felt deprived-” यह एक वाक्य उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि तथा भारत की परिवारिक संस्कृति का ऐसा रेखाचित्र प्रस्तुत कर देता है जिसे केवल अनुभूत ही किया जा सकता है, व्याख्या नहीं की जा सकती । श्री जीत बिन्द्रा एक साधारण मध्यम वर्गीय परिवार से ताल्लुक रखते थे; उत्तर प्रदेश के बनारस शहर में उनका परिवार रहता था और वहीं उनका जन्म सन 1947 में हुआ। श्री बिन्द्रा की प्रारंभिक शिक्षा तत्कालीन परम्परानुसार एक प्राइमरी पाठशाला में हुई, जहाँ पर वह जमीन पर टाट-पट्टी बिछाकर बैठते थे और नरकट की लकड़ी के बनाए हुये कलम से लिखते थे। कहना न होगा कि ‘होनहार बिरवान के होत चीकने पात’ श्री बिन्द्रा जन्म से प्रतिभाशाली थे और तमाम अभावों के बावजूद पढ़ाई में अपने विद्यालय में हमेशा अव्वल आते थे। चुनांचे प्रारंभिक पढ़ाई पूरी करने के बाद कॉलेज की पढ़ाई के लिए उन्हें सरकारी छात्रवृत्ति प्रदान की गई। यह दुर्योग ही था कि जिस वर्ष 1969 में उन्होंने इस संस्थान से अपनी बी.टेक. की पढ़ाई पूरी की उसी वर्ष उनके पिता जी सरकारी सेवा से मुक्त हो गए और परिवार से मिलने वाली आर्थिक सहायता बंद हो गई। वस्तुतः उन्हें इस बात का भी एहसास था कि मात्र स्नातक की डिग्री से उनकी और उनके परिवार की अपेक्षाएं पूर्ण होने वाली नहीं हैं इसलिए

गुरुदक्षिणा

श्री जीत बिंद्रा

परास्नातक स्तर की शिक्षा हेतु वे, उन्हीं के शब्दों में “The land of opportunity”, यानी अमेरिका प्रस्थान कर गये ।बहुत पुरानी कहावत है कि आर्थिक अभाव व दुश्वारियाँ व्यक्ति को जल्दी परिपक्व और पारखी बना देती हैं। जाहिर है कि श्री जीत बिंद्रा में अपने चारों तरफ की परिस्थितियों की सूक्ष्म पकड़ थी। आकर्षक व्यक्तित्व, उचित समय पर उचित निर्णय लेकर कार्य करने की क्षमता उन्हें विरासत में मिली थी। यही कारण था कि विदेश में परास्नातक शिक्षा के दौरान जब उन्हें लगा कि असिस्टेंटशिप में मिलने वाली राशि बमुश्किल अध्ययन सामग्री और जेब खर्च के लिए ही पर्याप्त हो पाती है तो अपना खर्च चलाने के लिए उन्होने एक रेस्टोरेंट में रसोइये के रूप में भी काम करने से गुरेज नहीं किया। कठोर परिश्रम करते हुए अपनी एम-टेक की पढ़ाई पूरी कर अपनी नई नवेली अमेरिकन पत्नी के साथ राष्ट्र सेवा की भावना से प्रेरित श्री बिंद्रा स्वदेश वापस आ गए और भारत में उन्होने दो कंपनियों में कार्य किया, एक कंपनी में तो महाप्रबंधक भी रहे। परंतु अपने ही देश में व्यवसाइयों के प्रति सरकारी उदासीनता, निराशाजनक वातावरण तथा भ्रष्ट नौकरशाही ने उन्हें पुनः भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया। उन्हीं के शब्दों में “ I found the business environment in India extremely frustrating because of the stifling bureaucracy, the lack of career opportunities and the intolerable corruption that permeated all levels of business...” तदनुसार वे 1977 मे पुनः अपनी पत्नी और छोटे बच्चे के साथ सिएटल अमेरिका पहुँच गए। शीघ्र ही शेवरॉन कंपनी के वातावरणीय अभियांत्रिकी एवं अनुसंधान डिवीजन में उनकी नियुक्ति हो गई। हमेशा की तरह उन्हें शीघ्र ही आभास हो गया कि अनुसंधान और विकास का कार्य उन्हें उतना रुचिकर नहीं लगता जितना कि प्रबंधन। उन्होंने 1979 में एमबीए की डिग्री हासिल की और अपने नियोक्ता से कम्पनी के प्रोजेक्ट प्रबंधन समूह में तबादले के लिए निवेदन किया। यही वह समय था जब उन्हें कम्पनी के उच्च्य पदस्थ अमेरिकी अधिकारियों द्वारा नस्ल भेद का सामना करना पड़ा था जिसनें उनकी आत्मा को झकझोर दिया था फलस्वरूप श्री बिन्द्रा जी ने संभवतः अपने जीवन का सबसे साहसी निर्णय लिया था और स्वयं से वचनबद्ध हुए कि एक दिन वे कंपनी प्रबंधन को ये प्रमाणित कर देंगे कि हम भारतीय गोरों की अपेक्षा अपनी प्रबंधन योग्यता, निर्णय लेने की क्षमता और उत्तरदायित्व को निर्वहन करने में किसी भी प्रकार से कम नहीं हैं उन्हीं के शब्दों में “Nirvana is the hindu word for the place where we are free from life’s trials and turbulences”. गोया कि मिस्टर जीत बिन्द्रा अपने धुन के बड़े पक्के थे और वे आज भी इस विचार के प्रबल समर्थक हैं कि किसी भी समूह में विभिन्न लोगों की उपस्थिति व्यापारिक समस्याओं के निदान को सरल बनाती है न कि प्रतिष्ठान को किसी प्रकार का नुकसान पहुँचाती हैं एक जगह अपना विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा है कि यदि आप समाज की मुख्यधारा में स्वयं को एक सफल व्यक्ति के रूप में देखना चाहते हैं तो आपको अपने सोचने, समझने और सम्पर्क के दायरे को न केवल विस्तृत करना पड़ेगा बल्कि सामाजिक व्यवस्था में आपको समय भी देना पड़ेगा और वस्तुत: 1977 में शोध अभियंता के रूप में अपनी नौकरी की शुरुआत करने वाले श्री बिन्द्रा 1990 में उसी कंपनी में यूनिट मैनेजर के रूप में पदस्थ हुए तथा 1994 में उन्होंने स्ट्रैटेजिक मैंनेजर के पद को संभाला। 1995 में श्री बिन्द्रा ने पश्चिमी कजाखिस्तान के टेंगिज ऑयल फील्ड से लेकर काला सागर तक तेल एवं प्राकृतिक गैस पाइपलाइन के अभिकल्प एवं विनिर्माण परियोजना का सफल नेतृत्व किया। 1997 में कंपनी के चेयरमैन के पद पर रहते हुए उन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका में तेल एवं प्राकृतिक गैस तथा रासायनिक पद्धार्थों की आपूर्ति के कार्यों का नेतृत्व किया। 2002 में श्री बिन्द्रा ने केलटेक्स ऑस्ट्रेलिया लिमिटेड में प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यकारी अधिकारी का पद संभाला। इस प्रकार अपनी दूर दृष्टि, पक्के इरादे, उच्चकोटि की उद्यमिता, अनुशासन एवं कठोर परिश्रम की बदौलत श्री बिन्द्रा ने अपने जीवन में व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक सफलताओं के कई पायदानों को पार किया। श्री बिन्द्रा को 1997 एवं 2000 में क्रमश: रसायन अभियांत्रिकी विभाग, वाशिंगटन विश्वविद्यालय व भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा प्रतिष्ठित पूर्वछात्र के रूप में सम्मानित किया गया। आपने

श्री बिन्द्रा सपरिवार अपनी पोती का जन्मदिन मनाते हुए।

एसोसिएशन ऑफ ऑयल पाइप लाइन तथा चेयरमैन ऑफ बिजनेस लीडरशिप काउंसिल के अध्यक्ष के रूप में भी अपनी सेवाएं प्रदान की हैं।

वस्तुतः बहुमुखी प्रतिभा एवं आकर्षक व्यक्तित्व के धनी श्री बिन्द्रा ने "विद्या ददाति विनयम्, विनयात् याति पात्रताम्। पात्रत्वाद धन्माप्नोति, धनाद धर्मं ततः सुखम्।।" के सिद्धान्त को अपने जीवन में बखूबी उतारा है और अनेक परोपकारी योजनाओं को पोषित किया है। आपने इस संस्थान को भी आर्थिक रूप से समृद्ध बनाने में सराहनीय योगदान किया है जिसमें श्रीमती एवं श्री ज्ञानसिंह बिंद्रा इण्डाउमेंट फेलोशिप 'चेयर' प्रमुख है। खास बात तो यह है कि श्री बिंद्रा आज भी संस्थान से बहुत गहराई से जुड़े हुये हैं और नियमित रूप से अपना आर्थिक योगदान कर रहे हैं।

श्री बिंद्रा जी ने जिस सैद्धान्तिक जीवन को जिया है, उसी को वे नौजवान पीढ़ी को बतौर संदेश समर्पित करते हैं:

1. Maintain the highest level of ethics and integrity-
   उच्चकोटि के आदर्श और ईमानदारी को अपनाओ।
2. Breakdown the stereotypes of being Indian-
   रूढ़िवादी भारतीय सोच को समाप्त करो।
3. Never stop learning in your life-
   जीवन में हर पल सीखने का प्रयास करते रहो।
4. Dream big and work hard to get there-
   बड़े सपने देखो और उसे प्राप्त करने के लिए कठोर परिश्रम करो।

इस संस्थान के पूर्व छात्रों ने अनेक चेयर और छात्रवृत्तियों को स्थापित कर संस्थान में आधुनिक शिक्षण-प्रशिक्षण को गति प्रदान की है और अनुसंधान कार्यों के लिए ठोस आधार मुहैया करवाया है। कहना न होगा कि इस अभियान में श्री जीत बिंद्रा ने एक आदर्श प्रस्तुत किया है। संस्थान की ये प्रत्याशा है कि भविष्य मे भी हमारे पूर्व छात्र इसी तरह से संस्थान की प्रगति में सकारात्मक भूमिका निभाते रहेंगे जिससे संस्थान में शिक्षण-प्रशिक्षण एवं शोध-कार्यों को नया आयाम मिलेगा और साथ ही संस्थान को राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय फ़लक पर नई पहचान मिलेगी तथा भविष्य का भारत बेहतर और सुरक्षित होगा।

राजभाषा प्रकोष्ठ

रूबरू

प्रोफेसर मणीन्द्र अग्रवाल

"सुखं वा यदि वा दुःखं प्रियं वा यदि वा अप्रियम् ।
प्राप्तमं प्राप्तमुपासीत ह्रदयेनापराजितः"

"अर्थात चाहे सुख हो या दुख, प्रिय हो या अप्रिय, जो मिल जाय उसे, ह्रदय से बिलकुल अपराजित होकर, उल्लास के साथ ग्रहण करो। हार मत मानो।" ॥ शांति पर्व: महाभारत ॥

ह्रदयेनापराजितः! उसका ह्रदय कितना विशाल होता है जो जीवन में सुख, दुख, प्रिय और अप्रिय से विचलित नहीं होता । यद्यपि यह कठिन है फिर भी सत्य है कि जीवन जीना तो एक कला है; क्योंकि सुख-दुख, सफलता-असफलता आदि मन के विकल्प ही तो हैं। जिसका मन वश में होता है, प्रसन्नता उसकी अनुगामिनी हो जाती है, वह अपने सांसारिक कर्तव्य-निर्वहन में भी हर क्षण आनंदित होता हुआ अविचलित रहकर अपराजित स्वभाव से सोल्लास जीवन की समस्त गतिविधियों को स्वीकार कर लेता है। पत्रिका के स्थायी स्तम्भ "साक्षात्कार" के अंतर्गत इस बार ऐसे ही व्यक्तित्व के धनी संस्थान के प्रतिष्ठित संकाय-सदस्य प्रोफेसर मणींद्र अग्रवाल जी से आपको रूबरू करवाते हैं। बेहद शालीन रहने वाले प्रो. अग्रवाल इसी संस्थान के मेधावी छात्र रहे हैं; संप्रति, संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग के संकाय-सदस्य होने के साथ-साथ अधिष्ठाता, संकाय-कार्य का उत्तरदायित्व भी संभाल रहे हैं। डॉ. अग्रवाल ने शिक्षण-प्रशिक्षण तथा शोध के अनेक प्रतिमानों को गढ़ा है और राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर पर नज़ीर स्थापित करते हुए संस्थान को ख्याति दिलाई है। इसी वर्ष भारत सरकार ने आपकी उपलब्धियों पर आपको "पद्मश्री" से अलंकृत किया है जिससे पूरा संस्थान गौरवान्वित हुआ है।

प्रस्तुत है प्रोफेसर मणींद्र अग्रवाल के साथ साक्षात्कार के प्रमुख अंशः

सुनीता सिंह-सर! अपने बारे में और अपनी अभिरुचियों के बारे में कुछ बताएं जिससे संस्थान अभी तक अनभिज्ञ है। हिन्दी साहित्य को आज आप कहाँ पाते हैं ?

प्रो.अग्रवाल– मेरा बचपन जन्म से लेकर 12वीं क्लास तक इलाहाबाद शहर में बीता । पिता श्री सुरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल, गणित के शिक्षक तथा माँ हिमांशु बाला अग्रवाल शिक्षा शास्त्र की शिक्षिका थीं। परिवार के अन्य सदस्यों में पत्नी रचना और दो बेटियाँ ईशा और आरुषी हैं। बड़े भाई शचीन्द्र अग्रवाल अपने परिवार के साथ अमेरिका में रहते हैं। यही मेरा पारिवारिक परिचय है। अभिरुचियाँ तो पहले बहुत थीं लेकिन अब सब खत्म सी हो गई हैं। पहले रॉक म्यूजिक सुनने का बहुत शौक हुआ करता था और सुनता भी बहुत था। सिनेमा देखने का बहुत शौक था विशेष रूप से अमिताभ बच्चन की फिल्में मुझे बहुत पसंद थीं। लेकिन अब तो समय भी नहीं मिलता और मन भी नहीं करता। विज्ञान का विद्यार्थी होने के कारण हिन्दी-साहित्य पढ़ने में विशेष रुचि पैदा नहीं कर पाया लेकिन हिन्दी में बच्चों की जो पत्रिकाएँ जैसे नन्दन, चम्पक, चंदामामा आदि आती थीं, उन्हें जरूर पढ़ लिया करता था।

मेरा मानना है कि हिन्दी-साहित्य मे मुंशी प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद के बाद जो साहित्यकार हुए वे अपनी ही रचना को एक विशिष्ट विचारधारा के रूप में स्थापित करने के चक्कर में कई खेमों में बाँटते चले गए और जनसाधारण से दूर होते गये। मेरे विचार से साहित्य का निर्माण किसी विचारधारा या सिद्धान्त से नहीं होता बल्कि प्राणि-मात्र के सुख-दुख, अनुभव, संयोग-वियोग आदि का स्वाभाविक चित्रण ही साहित्य बनता है जिसे पढ़कर पाठक रचनाकार से अपना तादात्म्य बिठा लेता है और वही कृति कालजयी बन जाती है; मैं भी उसे ही उच्च साहित्य मानता हूँ। दुर्भाग्य से आधुनिक हिन्दी साहित्य में बहुत कम ऐसे रचनाकार हैं जिनकी रचनाओं में मैं स्वयं को तलाश कर पाता हूँ।

सुनीता सिंह- सर! मेरी समझ में आपके व्यक्तित्व का जो सबसे प्रमुख पक्ष लोगों को आकर्षित करता है वह है आपका हमेशा शांत दिखना। प्रायः यह देखा जाता है कि जो बहुत साधना करते हैं, या योग, प्राणायाम आदि करते हैं वही आज के भाग-दौड़ वाले जीवन में शांत और स्थिर दिखते हैं। हम जानते हैं कि आपको पढ़ाना भी रहता है, शोध करना और करवाना रहता है, साथ ही साथ अधिष्ठाता, संकाय-कार्य का उत्तरदायित्व भी संभाले हुए हैं, परिवार की जिम्मेदारियाँ अपनी जगह हैं। आखिर आप इन सभी गतिविधियों में सामंजस्य कैसे बिठा लेते हैं कि किसी प्रकार का तनाव आपके चेहरे पर प्रकट नहीं होता?

प्रो.अग्रवाल– [हँसते हुए] देखिये मैं न तो कोई साधना करता हूँ और न ही प्राणायाम करता हूँ। और मैं किसी विशेष प्रकार की जीवन शैली का अनुसरण भी नहीं करता हूँ बल्कि बिलकुल उन्मुक्त जीवन जीता हूँ। हाँ! मैंने जितना हिन्दू-धर्म और दर्शन की अवधारणा को समझा है, उस आधार पर मैंने अपना एक सिद्धान्त बना रखा है और वो यह है कि मैं जो भी कुछ कर रहा हूँ, वह महत्त्वपूर्ण नहीं है और न ही वह चिर-स्थायी है। इसलिए मेरा काम अच्छा होगा या बुरा होगा, मैं उसकी चिंता नहीं करता। हाँ जो करता हूँ शौक से करता हूँ, अपनी इच्छा से करता हूँ और आनंद ले-लेकर करता हूँ। अब इस पर कुछ लोग प्रतिकूल प्रतिक्रिया दे सकते हैं कि इससे तो नैराश्य की भावना पैदा हो सकती है, क्योंकि जब कोई चीज महत्त्वपूर्ण ही नहीं है तो हम उसमें दिलोजान से क्यों दिलचस्पी लेंगे? लेकिन मेरा विचार है कि यह गलत व्याख्या है सही व्याख्या यह है कि इस दुनिया में कोई भी सर्वज्ञ, सर्वव्याप्त और सर्वशक्तिमान नहीं है। वस्तुतः प्रकृति के अतिरिक्त कुछ भी शाश्वत नहीं है। इसलिए हमें ये समझना होगा कि हम इस दुनिया में एक निश्चित अवधि के लिए आए हैं और अगर इस दुनिया को आनेवाली पीढ़ी के लिए खूबसूरत बनाना है, तो हम सभी का दायित्व बनता है कि जो भी करें, यह समझ कर करें कि ये आने वाली पीढ़ी के लिए है। अतएव अपनी इच्छा से करें और इस पूरी प्रक्रिया में नैसर्गिक आनंद को अनुभूत करने का प्रयास करें, जिससे कोई भी कार्य उबाऊ न होकर आनंददायी बन सके। यदि आप अपने कार्य में यथोचित आनंद की अनुभूति नहीं करेंगे, तो आपको स्वयं महसूस होगा कि प्रयास में कमी रह गई है और इसीलिए उम्मीद के अनुसार नतीजा नहीं मिला। भले ही और लोग ये समझें कि कार्य बहुत उम्दा है, लेकिन आपको उस आनंद की अनुभूति नहीं होगी जिसे हम प्राकृतिक या नैसर्गिक आनंद कहते हैं। यही मेरे जीवन-जीने का फलसफ़ा है।

सुनीता सिंह-सर! यूँ तो आपके शोध-पत्रों का बहुत से समाचार-पत्रों में उल्लेख किया गया है और लोग अपने शोध के दौरान आपके द्वारा किए गए अन्वेषण को संदर्भ-सूत्र के रूप मे भी प्रयोग करते हैं। मैं जानना चाहती हूं कि आपके द्वारा किए गए शोध-विषयों में आपका सबसे प्रिय शोध कौन सा रहा है, जिसे आप आज भी अपना सर्वोत्कृष्ट शोध मानते हैं?

प्रो.अग्रवाल-दरअसल मेरा जो शोध सबसे ज्यादा चर्चित हुआ है वो prime number से संबन्धित है लेकिन वो मेरा सबसे प्रिय शोध नहीं है मेरा जो सबसे प्रिय शोध रहा है उसे complexity theory कहते हैं। इसमे समस्याओं [problems] का वर्गीकरण [classified] किया जाता है जैसे आपको दो संख्याएं दी गई हैं उन्हें जोड़िए और उनका योगांक निकालिये। ये तो एक साधारण सा प्रश्न है। अब इसी तरह से बड़े और उलझे हुये प्रश्न हो सकते हैं जैसे कानपुर की ट्रैफिक-व्यवस्था एक गंभीर समस्या है, उससे कैसे निजात पाया जाए और कैसे समाधान निकाला जाए? कहाँ-कहाँ पर ट्रैफिक लाईट लगाई जाए और वे कितनी-कितनी देर में जलें-बुझें आदि-आदि? यद्यपि ये एक बहुत मुश्किल समस्या है लेकिन इसका भी समाधान निकल सकता है। इसी प्रकार से समस्याओं की जटिलता और गंभीरता को देखते हुये एक अनुक्रम बनाया जाता है। अब इस अनुक्रम में जो आसान समस्या है उसे छोड़े दें और ऊपर की ओर चलें तो आप पाएंगे कि मुश्किल समस्याओं में एक वर्ग होता है जिसे np complete नाम दिया गया है। अब मैं इनके कुछ उदाहरण देना चाहूँगा जैसे आप लोगों ने map-coloring सुना होगा जिसमें दुनिया का नक्शा दिया हुआ होता है और उसे चार रंगों का उपयोग करके इस तरह से दर्शाना होता है कि कोई भी दो पडोसी देशों का रंग एक जैसा न हो। अब मैं आपको बताता चलूँ कि पाँच रंगों से तो ये बड़ी आसानी से हो जाता है, चार रंगों का प्रयोग करके भी ये हो जाता है लेकिन थोड़ी मुश्किल से होता है। यह भी सिद्ध हो चुका है कि तीन रंगों का उपयोग करके कुछ को तो किया जा सकता है लेकिन सबको नहीं किया जा सकता। इस प्रकार यह समस्या बहुत मुश्किल है और ऐसी समस्याएँ np complete के अंतर्गत आती हैं। एक और काफी प्रसिद्ध उदाहरण है travelling salesman problem मान लीजिये किसी देश का रोड-मैप दिया हुआ है उसमे बहुत सारे शहर हैं जो अलग-अलग सड़क से जुड़े हुए हैं और अलग-अलग स्थित हैं और एक salesman है जिसे कुछ बेचना है। अब उसको यह कहा गया है कि वह केवल 10000 किलोमीटर का रास्ता तय करेगा और सारे शहरों में जाकर समान बेंचकर वहीं आ जाएगा, जहाँ से चला है। अब ये स्वाभाविक है कि वह यह तलाश करेगा कि सबसे छोटा रास्ता कौन सा है जिससे वह सभी जगह पहुँच भी जाए और वापस भी आ जाए। अब बहुत से रास्तों में से एक छोटा सा रास्ता निकालना बहुत कठिन समस्या है ये भी np complete के अंतर्गत आती है। इसी प्रकार से तीसरा उदाहरण है सुडोकू खेल का। सुडोकू में 9X9 का एक ग्रिड होता है और वह 3X3 के सब ग्रिड में बँटा होता है उसमें आपको 1 से 9 तक की संख्याएं भरनी होती हैं। अब प्रश्न ये है की 9X9 का ही ग्रिड क्यों? हम 16X16 का भी ग्रिड बना सकते हैं जिसमें 4X4 के सब-ग्रिड हों और 1 से 16 तक की संख्याएं उसमें भरी जाएं। इसी तरह

25X25 का भी ग्रिड हो सकता है जिसमें 5X5 के और सब ग्रिड हों आदि-आदि। सुडोकू में दरअसल संख्या का वर्ग यानी $n^2\mathrm{X}n^2$ का ग्रिड होता है । इस तरह हम किसी को एक पूरा ग्रिड दे सकते हैं और उसमें कुछ संख्याएं भरी हुई होती हैं और शेष को पता करके भरना होता है । जैसे-जैसे ग्रिड कि संख्या बड़ी होती जाती है, सुडोकू बहुत मुश्किल होता जाता है कभी-कभी तो 9x9 वाला ग्रिड भी बहुत कठिन हो जाता है। तो आप कल्पना कर सकते हैं कि 25x25 अथवा 36x36 वाले ग्रिड कितने मुश्किल होंगे? इस प्रकार यह समस्या भी np complete के ही अंतर्गत आती है। वस्तुतः यह एक विशेष किस्म का वर्गीकृत क्षेत्र होता है जिसमें इस प्रकार की समस्याओं का हल ढूंढा जाता है। अब इसमें विशेषता क्या है? तो मैं आपको बता दूँ कि यद्यपि ये समस्याएँ बहुत गंभीर और कठिन होती हैं लेकिन यदि किसी ने इस प्रकार की किसी समस्या का समाधान दे दिया तो ये जाँचना बहुत आसान होता है कि समाधान सही है अथवा गलत? सच कहूँ तो मेरे शोध करने के दौरान ही मुझे इसमें काफी रुचि हो गई थी और लगभग 10 वर्ष की अनवरत शोध के उपरांत, मैं पूरे np complete समस्याओं के लिए तो नहीं कह सकता हूँ लेकिन उसके अंदर एक वर्ग है जिसमें बहुत सी रुचिकर समस्याएँ आती हैं, मैंने सिद्ध कर दिया कि ये समस्याएँ यद्यपि दिखती हैं अलग-अलग लेकिन यदि सूक्ष्मता से देखा जाए तो ये सब एक ही किस्म की समस्याएँ होती हैं जिनके बस रूप अलग-अलग होते हैं। इसे हमने Isomorphism Conjucture का नाम दिया है।

सुनीता सिंह- सर! आपके शोध पत्रों में mathematics algorithm computation और algebra जैसे गणितीय शब्दों का बार-बार प्रयोग दिखाई पड़ता है जबकि आप Computer Science and Engineering के विद्यार्थी रहे हैं। मैं चाहती हूँ कि कम्प्युटर साइंस के संदर्भ में इन गणितीय शब्दों के प्रयोग पर प्रकाश डालें।

प्रो.अग्रवाल- देखिये कम्प्युटर साइंस के दो भाग हैं। एक तो वो जो सबको दिखता है जिसे हम 'सॉफ्टवेयर' वाला भाग कहते हैं और दूसरा होता है सैद्धान्तिक [theoretical] भाग। जैसे हमने अभी आपको complexity theory के बारे में बताया। इसका सीधा प्रभाव सॉफ्टवेर में भी दिखता है तो जो ये कम्प्युटर साइंस का theoretical पार्ट है वो गणित से काफी नजदीक का संबंध रखता है और मेरी रुचि हमेशा से ही गणित और कम्प्युटर साइंस के उसी theoretical पार्ट से रही है, इसीलिए हमारे शोध-पत्रों मे गणितीय शब्दों का बहुतायत में प्रयोग दिखता है और कोई विशेष कारण नहीं है।

प्रोफेसर मणीन्द्र अग्रवाल अपनी पत्नी एवं पुत्रियों के साथ

सुनीता सिंह- सर! आप किसे अपना आदर्श मानते हैं?

प्रो.अग्रवाल- मैंने किसी व्यक्ति विशेष के जीवन से कोई प्रेरणा ली हो ऐसा नहीं है। लेकिन बहुत सारे ऐसे महान लोग हैं जिन्होंने देश और दुनिया को बहुत कुछ दिया है, और मैं ऐसे बहुत से लोगों का प्रशंसक हूँ और बहुत आदर करता हूँ। लेकिन मैं समझता हूँ कि मेरे अंदर शायद ऐसी क्षमता नहीं है कि मैं उनके आदर्शों को जीवन में उतार सकूँ या उनसे प्रेरित होकर कुछ विशेष कार्य कर सकूँ। इसे मैं अपना दुर्भाग्य ही कहूँगा कि मैं किसी के पद-चिह्नों पर नहीं चल सका क्योंकि कभी भी मैंने अपने को इतना समर्थ नहीं पाया। दरअसल मेरा जीवन कभी सुनियोजित तो रहा नहीं, कभी कोई कार्य सायास और सोद्देश्य किया नहीं बस समय के बहाव के साथ बहता रहा जो सामने आया उसे करता रहा "जो मिल गया उसी को मुकद्दर समझ लिया" और आज यहाँ पर हूँ।

सुनीता सिंह- "अंतस्" पत्रिका को और समृद्ध करने के लिए कुछ सुझाव देना चाहेंगे।

प्रो.अग्रवाल- व्यक्तिगत रूप से मैं कहूँ तो तो मुझे "अंतस्" का पहला संस्करण ही बहुत उच्च स्तर का लगा। मैं तो चाहूँगा कि उत्तरोत्तर प्रयास होते रहना चाहिए लेकिन सबसे आवश्यक है कि हमने जो स्तर पहले अंक में ही हासिल कर लिया है कम से कम उसे तो बरकरार रखें ही और साथ ही साथ उसमें और निखार लाने का प्रयास करते रहें यही मेरी अभिलाषा है। हार्दिक प्रसन्नता है कि "अंतस्" पत्रिका का चौथा अंक प्रकाशित होने जा रहा है "अंतस्" परिवार को हमारी बहुत-बहुत शुभकामनायें।

सुनीता सिंह- आप पिछले कई वर्षों से इस संस्थान से जुड़े हुए है। आपने

भी महसूस किया होगा राष्ट्रीय स्तर की परीक्षा पास करके जो छात्र यहाँ प्रवेश लेते हैं यदि उनका प्रतिभा के आधार पर वर्गीकरण करें तो पाएंगे कि तीन प्रकार के विद्यार्थी यहाँ पर प्रवेश लेते हैं कुछ तो विलक्षण प्रतिभा के धनी होते हैं। वे कम परिश्रम करके भी शिखर पर रह सकते हैं। कुछ मध्यम श्रेणी के होते हैं लेकिन वे मेहनती बहुत होते हैं परंतु कुछ केवल औसत दर्जे के छात्र होते हैं और यहाँ आकर वे मेहनत भी नहीं करते। प्रश्न ये है कि विद्यार्थियों के उपर्युक्त स्तर को देखते हुये क्या आप वर्तमान शिक्षण-पद्धति को उपयुक्त मानते हैं यदि नहीं, तो तीसरे प्रकार के विद्यार्थियों की आवश्यकता को देखते हुए आपके क्या सुझाव हैं?

प्रो.अग्रवाल- आप सही कह रही हैं यदि सूक्ष्म विचार करें तो शिक्षण की वर्तमान पद्धति उपर्युक्त वर्गीकरण पर आधारित नहीं है, जाहिर है कि इस प्रकार से सबकी जरूरतें पूरी नहीं हो पातीं हालांकि हमारे कई प्राध्यापक भरपूर प्रयास करते हैं कि सभी तरह के विद्यार्थियों के ज्ञान में गुणात्मक परिष्कार हो। परंतु यह भी सत्य है कि आज के दौर में ऐसी शिक्षण-पद्धति की महती आवश्यकता है जो मूलतः core-courses के पाठ-भेद के आधार पर दो श्रेणियों एक- 'स्थायी' और दूसरे- 'विकसित पाठ्यक्रम' में बंटी हो और विद्यार्थी को अपनी प्रतिभा के आधार पर दोनों में से किसी एक को चयन करने की छूट हो तथा जिसका उल्लेख उसकी अंक-तालिका में भी किए जाने का प्रावधान हो। मेरा विचार है कि यह प्रणाली भिन्न-भिन्न स्तर के छात्रों कि आवश्यकता को पूरी करने में काफी हद तक कारगर साबित होगी। हालांकि इस व्यवस्था को लागू करने के लिए हमें अभी बहुत संकाय-सदस्यों की जरूरत है वस्तुतः जब तक इस संस्थान में 500 के लगभग संकाय-सदस्य नहीं हो जाते इस प्रणाली को लागू करना मुश्किल होगा। हम प्रयासरत हैं कि यह लक्ष्य जल्द से जल्द हासिल हो।

नमस्कार एवं शुभकामनायें...

मूल्य

आइए हम अपने आज का बलिदान कर दें ताकि हमारे बच्चों का कल बेहतर हो सके।

डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम

मित्रता

सच्चा मित्रा वह होता है जो प्रतिदान मे बिना कोई अपेक्षा किए समर्पित होकर प्यार देने में सक्षम होता है। मित्रता समान लिंग जैसे पुरुष-पुरुष, महिला-महिला अथवा विपरीत लिंग के पुरुष-महिला के मध्य हो सकती है। मित्रता का संबंध आयु-बंधन को नहीं स्वीकारता। वस्तुतः मित्रता एक वृद्ध व्यक्ति तथा एक छोटे बालक के बीच भी हो सकती है। मनुष्य अपने पालतू पशु जैसे बिल्लियों, कुत्तों, घोड़ों, कबूतरों व तोतों से भी मित्रता स्थापित कर लेता है। पिता और पुत्र, माता और पुत्री, पति और पत्नी, भाई और बहन जैसे पारिवारिक संबंधों के मध्य भी मित्रता अनुभूत की जा सकती है यद्यपि पारिवारिक रिश्तों को बाँधे रखने में मित्रता से प्यार कहीं अधिक शक्तिशाली होता है। यदि गहराई से अनुभव करें तो पाएंगे कि मित्रता की तुलना में प्यार किंचित निम्नतर होता है। मित्रता में सम्बन्धों, परंपरागत पदानुक्रम आदि की स्वीकार्यता नहीं होती और वह उच्चतम भाव पर होती है। मित्रता में स्वतंत्रता एवं समानता, दोनों ही अंतर्निहित हैं। इसमें चयन और स्वेच्छा दोनों सन्नहित हैं। मित्रता की अवधारणा को समझने के लिए अन्वेषण की आवश्यकता है क्योंकि मनुष्य बहुधा अपने साथ-संबंध के आधार पर ही जाना जाता है। जाहिर है कि व्यक्ति के साथी-संबंधी उसके व्यक्तित्व-विकास को प्रभावित करते हैं। हमारे मित्र हममें विद्यमान गुणावगुण का प्रतिबिम्ब होते हैं। वे हमारे मित्र इसलिए होते हैं क्योंकि उनके विभिन्न स्वरूपों/स्वभावों में हम ही जीते हैं और उनका समेकित रूप ही हमारे स्वरूप की एकात्मकता का निर्धारण करता है।

सामान्यतः मित्रता तीन कारणों से होती है: **(क) गुणता (ख) उपादेयता (ग) आनन्द।**

पहले प्रकार की मित्रता गुणावगुण के आधार पर होती है तो उसका प्रभाव चमत्कृत कर देने वाला होता है। सख्य भाव इतना प्रबल होता है कि दोनों मित्र एक दूसरे के गुण-अवगुण के आकर्षण से अभिभूत रहते हैं। निःस्वार्थ भाव का आधिक्य होता है, मित्रता के स्थायी भाव में केवल मैत्री भाव ही होता है, इसमें जादुई आकर्षण होता है। एक मित्र अपने दूसरे मित्र के हित-अनहित को सर्वोपरि रखते हुए अपने प्राण तक देने को तैयार हो जाता है, भले ही उसका मित्र उतना बुद्धिमान, आकर्षक, उपयोगी अथवा प्रसन्नता देने में सक्षम न हो। वस्तुतः मित्रता का यह रूप निष्काम होता है और आध्यात्मिक अनुभूति कराता है।

दूसरे प्रकार की मित्रता उपयोगितावादी मूल्यों पर आधारित होती है। मेरे लिए अमुक व्यक्ति कितना उपयोगी है? मैं उससे कितना लाभ उठा सकता हूँ? क्या मैं उसकी कार का उपयोग कर सकता हूँ? क्या वह मुझे नौकरी दिलाने हेतु अपनी प्रतिष्ठा एवं प्रभाव का उपयोग कर सकता है? क्या आवश्यकता पड़ने पर वह मुझे पैसा उधार दे सकता है? आदि-आदि। इस प्रकार, एक व्यक्ति व्यावहारिक, पेशेवर तथा राजनीतिक कारणों से संबंध बनाता है या बनाए रख सकता है । मुझे स्मरण है कि मुंबई से चेन्नई की रेल यात्रा के दौरान मैंने दो लोगों से मित्रता कर ली थी। यात्रा का समय व्यतीत करने हेतु निश्चय ही वह सबसे नायाब तरीका था। पुनः आगे की यात्रा जारी रखने के लिए हम सभी को बस स्टैण्ड भी जाना था। अतः हमने ऑटोरिक्शा कर लिया और उसका किराया साझा कर लिया। किन्तु हम जैसे ही अपने गंतव्य स्थान जाने के लिए बस पर चढ़े, हमारे अंदर गृहनगर के अपने निकट संबंधियों से मिलने की उत्कंठा बढ़ने लगी और हम यात्रा के दौरान मिले सहयोगियों को भूलने लगे। इस प्रकार की मित्रता की यही विशेषता होती है। यह तभी तक चलती है जब तक हमें इसकी जरूरत है। ऐसी मित्रता अपनी उपादेयता खत्म होने के साथ ही अंततोगत्वा समाप्त हो जाती है। यह केवल तत्क्षण व जरूरत के समय अच्छी लगती है।

तीसरे प्रकार की मित्रता मूलतः संबंधों से प्राप्त होने वाले आनंद के फलस्वरूप पनपती है। कल्पना कीजिये कि एक जोकर है, उसके मंच पर प्रवेश करते ही आप चिंता मुक्त हो जाते हैं। आप बस विस्मृत भाव से प्रतीक्षा करते हैं कि कब उसके खजाने से एक नया खेल निकलकर आपको सहसा ठहाका लगाने हेतु विवश कर देगा और वह आपको निराश भी नहीं करता। कल्पना कीजिये कि आपकी एक मित्र है। वह एक अति बुद्धिमान, आकर्षक एवं सुन्दर व्यक्तित्व की स्वामिनी है। मात्र इस भाव से कि वह आपकी मित्र है, आपको गर्वानुभूति होती है। आपके लिए इतना ही पर्याप्त है कि वह आपके साथ टहलती है, बात करती है और चाय पीती है। आप

मानों सातवें आसमान पर होते हैं कि वह आपको दैहिक, भावात्मक, मानसिक और भौतिक आनंद प्रदान करने में कितनी समर्थ है?

अब प्रश्न यह है कि तीनों में से कौन सी मित्रता अच्छी है? ऐसा लगता है कि मित्रता का पहला प्रकार सबसे अच्छा है किन्तु वह अन्यों की भाँति उपयोगी अथवा आनंदप्रद नहीं है। दूसरे प्रकार की मित्रता अच्छी है किन्तु दीर्घकालिक मापदण्ड पर वही खरी नहीं उतरती। अंतिम प्रकार की मित्रता भी अच्छी है परन्तु अपने जीवन में भला कोई कितने समय तक केवल मौज-मस्ती कर सकता है? एक दिन में एक व्यक्ति कितने लतीफे सुन सकता है? और क्या वे उसे निरंतर उतनी ही खुशी दे सकते हैं जितनी उन्होंने उसे प्रारंभ में दी थी? क्या वह एक दिन संतुष्टि की परिसीमा तक नहीं पहुँच जाता जिसके उपरांत वह मानसिक और भावनात्मक थकान महसूस करने लगता है। जहाँ वह कदाचित स्वयं में सिमट जाना पसंद करने लगे अथवा क्या वह संसार की नादानी पर हँसने के बजाए अंत में आँसू बहाये।

सूक्ष्म अवलोकन से पता चलता है कि मित्रता के ये सभी प्रकार पूर्णतया एक दूसरे से जुदा-जुदा अस्तित्व नहीं रखते वरन् वे एक दूसरे को आच्छादित करते हैं। उपयोगिता के आधार पर आरंभ किया गया संबंध समय के साथ गुणों के आधार पर निष्काम मित्रता का रूप ग्रहण कर सकता है। इसी प्रकार गुणावगुण पर अवलंबित मित्रता भी उपयोगितावादी एवं आनंददायी हो सकती है। तीनों प्रकार की मित्रता के कारकों का होना अपने में एक आदर्श स्थिति कही जा सकती है।

लेकिन मित्रों! आप समझ सकते हैं कि रिश्ते बनाना कितना दुष्कर है? गुणाधारित रिश्ते अधिकांशतः बचपन व स्कूली शिक्षा के दरम्यान पनपते हैं और कभी-कभार कॉलेज के दिनों में जहाँ हम अनजाने सुखानुभूति की स्थिति में अथवा ख्याली दुनिया में रहते हैं। परन्तु जब कोई कठोर यथार्थ से दो-चार होता है और स्वयं को सफल पेशेवर के रूप में ढ़ालना सीखता है, तब परिस्थिति उसे उपयोगिता आधारित मित्रता की जरूरत का एहसास कराती है। चाहे वह साथ में सिगरेट पीना हो या पिकनिक पर जाना अथवा उसी कंपनी के शेयरों में साथ-साथ निवेश का निर्णय करना। यद्यपि मैंने पूर्व में कहा है कि उपादेयतावादी मित्रता अपने आप में यथासमय गुणता के विकास में सक्षम होती है, परन्तु ध्यान रहे कि यह स्वतः स्फूर्त नहीं होता बल्कि इसमें उपादेयता का अंश मिला होता है। गुणावगुण पर आधारित दोस्ती इस अर्थ में अद्भुत होती है कि यह ब्रह्माण्ड के अंत तक शाश्वत रहती है! तथापि यह स्वीकार करना ही होगा कि गुणों पर आधारित दोस्ती

अधिकांशतः हमारी युवावस्था, अपरिपक्व उम्र (यद्यपि उस समय हम यह सोचते थे कि समूह में हम ही सर्वाधिक परिपक्व थे) की अवस्था के मध्य पनपती है। तब मस्तिष्क आश्चर्यजनक ढंग से उन्मुक्त होता है और कान बिना पूर्वाग्रह के सुनते हैं, अन्तर्मन से स्वतः प्रवाहित शब्दों को वाणी मधुरता से व्यक्त करती हैं। यह जानना सुखदायक है कि मूल्याधारित दोस्ती प्रायः अवसर पाकर पेशेवर/राजनीतिक/भौतिक बन जाती है। अक्सर यह दोस्ती आश्चर्यजनक रूप से अत्यल्प समय में होती है और अनन्तकाल तक कायम रहती है । अपने टेलीपैथिक अन्तः ज्ञान के अध्ययन में रिचर्ड बासेन सच ही कहते हैं कि आप जीवन भर एक साथ रहते हुए भी अपने संबंधियों को उतनी गहराई से नहीं समझ पाते जबकि सच्चे मित्र को एक पल में जान जाते हैं।

यहाँ तक मित्रता और मित्र की बहुत बातें हो गईं....... अच्छा! क्या मैं सहसा कुछ सनकी सा नहीं लगने लगा हूँ? शायद! मेरे प्रिय विषय रिश्तों को परिभाषित करने के संदर्भ में! तो मैं कहता हूँ, हाँ ! परन्तु क्यों ?

फ्रेडरिक नीत्से महसूस करते हैं कि सही प्रकार की दोस्ती तभी होती है जब हम भीतर व बाहर के शत्रु को समझ लेते हैं। अतः जब अरस्तू ने कहा, अरे मित्रों! यहाँ कहीं कोई शत्रु नहीं हैं, तो प्रतिक्रिया में फ्रैडरिक नीत्से ने अपनी विशिष्ट शैली में प्रतिवाद किया था, ओ शत्रुओं, यहाँ कहीं कोई शत्रु नहीं हैं। अरस्तू का निहितार्थ था कि मित्र ही छद्म रूप में वास्तविक शत्रु होते हैं; तो नीत्से ने इस असंगत वक्तव्य पर प्रतिक्रिया दी थी कि छद्म रूप में शत्रु ही मित्र होते हैं। दरअसल नीत्से समर्पण भाव से अपने मित्रों को देते रहने की, परन्तु शत्रुओं को माफ करने अथवा भूल जाने की हमारी प्रवृत्ति का तिरस्कार करते हैं। पाठकों को यहाँ इसाई धर्म के सिद्धान्त अपने पड़ोसियों

से प्यार करो अथवा आपके एक गाल पर कोई थप्पड़ मारे तो उसके सामने दूसरा गाल भी कर दो, के मद्देनजर दिग्भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि नीत्से के लिए ईश्वर अस्तित्वहीन है (यद्यपि यह एक रूचिकर किन्तु अप्रासंगिक बिन्दु है, अतः मैं एक निरर्थक बहस में नहीं पड़ना चाहता।) कुल मिलाकर नीत्से जो व्यक्त करना चाहते हैं वो यह है कि जब कोई अपने मित्र को देने के प्रति इतना उदात्त हो तो उसे यह भी सीखना चाहिए कि शत्रु से कैसे निपटा जाय। यदि ऐसा नहीं होता तो मित्रता किसी भाँति भी अपना महत्त्व सिद्ध नहीं कर पाती।

निष्कर्ष यह है कि, जीवन में शत्रुता की पहचान, मित्रता के संबंधों का एक ऐसा व्यापक और परिपूर्ण दृष्टिकोण प्रदान करती है जो मित्रवत् प्रेम में गुणात्मक तीव्रता के साथ अधिकाधिक विनिमय प्रगट कर सके। लेकिन मित्रता के इस पहलू को अंधेरे में छोड़ देना शीघ्र ही इस संबंध को एकांगी बना देगा और इसके भागीदारों को निरन्तरता/अनिरन्तरता के असमंजसपूर्ण भय से ग्रस्त कर देगा। अतः जब हम अपने मस्तिष्क और ह्दय की शीतल, चटपटी एवं ऊर्ध्व कोशिकाओं में अपने मित्रों की मधुर स्मृतियों को संरक्षित रखते हैं तो हमें अपने शत्रुओं के सम्मान में अपनी आत्मा के सारे बंद दरवाजों को भी खोल देना चाहिए और इसके आगे हमें साथ-साथ यह प्रतिज्ञा भी लेनी चाहिए कि - **हे शत्रुओं! आपका स्वागत है और हे मित्रों! आप सुखपूर्वक मित्रता में स्थापित रहें।**

डॉ. टी. रविचन्द्रन
मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग

अनुवाद : राजभाषा प्रकोष्ठ

मेरी ओर भी देखो

क्या आप मुझे जानते हैं? अगर नहीं तो शायद कुछ पलों में आप मुझे जानने और पहचानने लगेंगे?

मैं एक छोटा बच्चा हूँ। अन्य शिशुओं की भाँति मेरा जन्म भी अपनी माँ के गर्भ से हुआ परन्तु अन्य की भाँति मेरे भाग्य में खिलौनों का सुख नहीं था वरन् उस भाग्य निर्माता ने मुझे निर्माणाधीन इमारतों में बालू, मौरंग और गिट्टी के बीच छोड़ दिया और स्वयं वह मेरे शैशव के पूर्ण होने की प्रतीक्षा करने लगा, शायद उसने मेरे लिए कुछ और ही सोच रखा था।

शैशवावस्था पूर्ण होने पर उसने मुझे जूठे बर्तनों में बैठा दिया। चाय के जूठे गिलास और चटनी से सनी हुई तश्तरियों के अलावा मेरे जीवन में कुछ नहीं बचा है। जिन हाथों में कलम की नीली स्याही लगी होनी चाहिए उनमें तो बस अब राख की कालिमा ही शेष रह गयी है। इतने पर भी उस निष्ठुर को दया नहीं आई और उसने मुझे फिर से उन्हीं निर्माणाधीन इमारतों में भेज दिया जहाँ मेरा बचपन बीता था। आज भी मैं उन दिनों को याद कर कुछ राहत की सांस लेता हूँ क्योंकि कम से कम उस समय इन कन्धों पर ईंट और पत्थर का भारी बोझ तो नहीं था। अपनी आयु के अन्य बालकों को देखकर मेरा भी मन करता है कि मेरे कन्धों पर बस्ता लटके, शायद जिसका वजन इन ईट पत्थरों से कम होता है।

अब तो आप मुझे पहचान ही गए होंगे कि मैं वहीं हूँ जो बस स्टॉप पर चाय की दुकानों से लेकर आपकी कैंटीनों में निरंतर सेवा में लगा रहता है। शायद मुझे और कहने की आवश्यकता नहीं है और वो भी उस समाज के सामने जो कदाचित इस देश के सभ्य और शिक्षित समाजों में से एक है।

श्याम पंजवानी, भूतपूर्व छात्र

गज़ल

कहाँ से ढूंढ़ के लाऊँ इन्सान को
भूल सा गया हूँ पहचान को
क्यों रहे हम खौफ-ए-गैर से
दहशत में छोड़ आया हूँ उन्वान को
ख्वाब रोज बदलते हों जहाँ
कैसे पहुँचे आरजू मुकाम को
शिनाख्त! फर्ज करो कि हो भी अगर
मुलाकात की फुर्सत ही कहाँ इंसान को
जज़्बा कायम रहता है किताबत तक
ज़मीं पे हो के परवाज आसमान को
ये कैसी इबादत कि सामने बुत है फरिश्ते की
और जेहन में रखते हो शैतान को
शुबहा तो होना लाज़मी था उन्हें
तुमने सच जो सुनाया था दास्तान को
जरूरत है कुछ कर गुजरने की अभी
मिल जा मिट्टी से भूलकरके अपनी शान को

चन्द्रशेखर गोस्वामी
यांत्रिक अभियांत्रिकी

हार कर भी जीत

जो जीवन में जब भी हारते हैं,
और निडर हो इसे स्वीकारते हैं,
वही जीवन को संवारते हैं।

जो जीवन में जीतते हैं,
जीत से नहीं कुछ सीखते हैं,
जीवन को वे जी नहीं पाते हैं।
यदि तुम भी कभी हारते हो
तो निडर होकर स्वीकार करो,

काम तो है ये मुश्किल,
पर मुश्किल कामों के लिए ही तो
भगवान उन्हीं को चुनते हैं,
भरोसा भी उन्हीं पे करते हैं,
जो कर सकते हैं मुश्किल काम,
हार कर भी जीवन को सुख से जीना।

भगवान स्वरूप शर्मा
सीनियर टेकनीशियन

हकीकत

एक कोने में बैठे हुए उसे कई बार देखा था। वहाँ एक बार किसी सिलसिले में जाना हुआ था, तभी पहली बार उस पर नजर पड़ी थी। फिर साल में एकाध बार उससे मिलने जाता जरूर था मगर कदम उसकी कोठरी के दरवाजे से आगे नहीं बढ़ पाते थे। कभी वो थोड़ा गंभीर दीखता था तो कभी कभार कुछ गमगीन। मैंने देखा था कि बीच-बीच में वह टहल लिया करता था, शायद! जब ख्यालात कम पड़ जाते होंगे तब। हाँ, एक बात जरूर तय थी और वो ये कि वो जब भी दिखता था तो कोने वाले उसी झरोखे के नजदीक दिखता था। वहाँ शायद इसलिए बैठता होगा कि हवा के हल्के झोंके रोशनदान से होते हुए दूर कहीं से किसी का दर्द छुपाये लाते हों या फिर इसलिए कि रोशनदान की सलाखों पे लटका हुआ वो चीथड़ा बौराई हवाओं में ऐसे छटपटाता था, मानो नन्हे कबूतर ने अपने पंख फड़फड़ाये हों । इन्हीं सब आवाजों को वो पसीजकर उड़ेल दिया करता होगा अल्फाजों के सांचे में और बना दिया करता होगा एक नयी नज़्म।

अब आप पूछेंगे कि आखिर वो था कौन? तो वो एक शायर था, अपने कमरे में खुद से कैद एक शायर। बाजार में जब जाता तो लोग उसे बेवकूफ समझते। खरीद फरोख्त के आम तरीके भी तो नहीं आते थे उसे। नज्मों में मात्राओं की नाप तोल करने में इतना मशगूल रह गया कि दुनिया की रस्में सीखना ही भूल गया था शायद। आखिर वो एक शायर था, कमरे में कैद एक शायर।

उस रोज मैं उसके कमरे की तरफ से इस मकसद से गुजरा, जान बूझकर, कि आज उससे रूबरू होकर ही रहूँगा, पूछूँगा कि आखिर उस काली अँधेरी कोठरी में घुटन नहीं होती होगी उसे? जंजीरों से जकड़ा हुआ नहीं महसूस करता होगा वो? मरीजों की तरह खिड़की के बाहर बेचारगी में आखिर क्या झाँकने की कोशिश करता रहता है वो ?

बड़े जोश के साथ कमरे में घुसा तो पाया कि वो जमीन पर लेटा हुआ था, वो भी औंधे मुँह। उसकी नज्में पुराने, पीले कागजों पर सवार होकर नाच रही थीं कमरे में इधर-उधर। और करीब गया तो देखा कि कोई हरकत नहीं थी, धड़कने बंद थीं, साँसे चल नहीं रही थीं और मुँह सूख गया था। सारा बदन अकड़ गया था, पेट इतना अन्दर था कि मानो हफ्तों से अनाज ही न पहुँचा हो वहाँ तक। फड़फड़ाते हुए फाख़्ते की तरह उड़ता हुआ पन्ना आया और उसके चेहरे से चिपक गया। मुझे महसूस हुआ कि वो!

बंद कमरे वाला शायर मुझसे कह रहा हो;
मैं वो नहीं जिसे तुम घूर रहे हो!
जो चिपक गया अभी-अभी,
वो मेरा असली चेहरा है!
वही हकीकत है मेरी!

चूँकि मैं बेजान शरीर से सवाल जवाब नहीं कर सकता था इसलिए रूबरू होने का मेरा जोश उसी ठंडी लाश के जैसा ठंडा हो गया। जब उसे कब्र में दफन करने की बारी आई तो मैंने साथ

में उसकी कोठरी से बटोरे हुए पन्ने, वहाँ से जब्त चंद तस्वीरें और उसकी दवात दफन करवा दी। कलम तो उसके हाथ में ही थी, मरने के बाद भी वो छूटी कहाँ थी? क्या कमाल का शायर रहा होगा वो ?उसकी अंतिम यात्रा में भी दो या तीन लोग ही शामिल हुये थे और अंत में तो सिर्फ अकेला मैं।

खोदने वाले ने आकर मुझसे मेहनताना माँगा क्योंकि उसका कोई रिश्तेदार वहाँ मौजूद नहीं था। दो सौ रुपये माँगे थे उसने, देने के लिए मैंने जेब टटोली। जेब खाली थी। सुबह के वक्त शायद जल्दी-जल्दी में बटुआ रखना ही भूल गया था। नजरें उठायीं कुछ देर में तो उसे दबी जुबान में गालियाँ देते हुए जाते पाया। हालांकि उसके जाते-जाते मैंने ये वादा तो उससे कर ही दिया कि घर से आते वक्त उसके पैसे दे दूँगा। मेरी इस बात को वो किसी सियासी वादे के जैसा मानता हुआ निकल गया, बिना मेरी और कोई ध्यान दिए।

घर लौटते वक्त मैं आस-पास पसरी हुई अनचाही खामोशी में अपने उन्हीं सवालों के जवाब टटोलने की कोशिश कर रहा था पर वो नहीं मिले बल्कि और उलझते चले गए। आखिर वो खुद में कैद रहकर क्या ढूँढ़ा करता था उस रोशन दान से झांक कर?

शायद! यही उसके मन में भी सवाल रहे हों या फिर हो सकता है वो मेरे लिए ही इन सवालों के जवाब ढूँढ़ता रहा हो।

सहसा सामने देखा तो मेरा प्यारा-सा घर किसी बिरही प्रेयसी की तरह मेरा इंतजार कर रहा था।

निशांत सिंह, छात्र

जूठा पत्ता

रामकृष्ण और रमण
रोग की यातना दोनों ने सही थी
मगर अपने अंतिम दिनों में
महर्षि ने एक बात कही थी
जीवन भोज है,
शरीर केले का पत्ता है
इस पत्ते पर आदमी
भोजन तो बड़े प्रेम से करता है
लेकिन खाना खत्म होते ही
वह उसे फेंक देता है
जूठा पत्ता भी कभी कोई
संभालकर धरता है?

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

अपने सिक्के

देश विदेश में फैले अपनों को समर्पित

अपने हैं तो सपने हैं, राग रंग, तराने हैं

अपने हैं तो क्लेश है, दुःख, सुख द्वेष है

अपने हैं तो कामनाएं हैं, द्रोह, प्रेम, भावनाएं हैं

अपने हैं तो भक्ति है, ग्लानि, ऊर्जा, शक्ति है

अपने हैं तो उद्देश्य हैं, अर्थ, अनर्थ, आशय है

अपने हैं तो अस्तित्व है, विष, अमृत, तत्व है

अपने हैं तो बंधन है, त्याग, मोह, स्पंदन हैं

अपने हैं तो प्रीति है, प्रमीति, कृति, रीति है

अपने नहीं तो क्या जीवन है?

अपने नहीं तो क्या मरण है?

डॉ. समीर खांडेकर

यांत्रिक अभियांत्रिकी विभाग

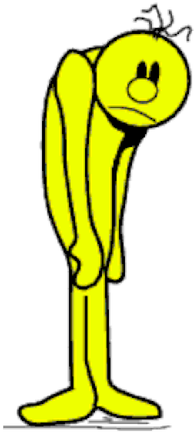

उलाहना

आज!
कुछ शब्दों ने मुझे रोका,
सरेआम, रास्ते में टोंका,
झकझोरा, चेताया, जोर से हिलाया,
जड़ चेतना में था..., मुझे जगाया।
फिर पूछा
क्या अंधे हो?
या सियासी बंदे हो?
क्यों सुनते नहीं चीत्कार?
हर गली, हर सड़क,
द्रोपदी हो रही शर्मशार....!
क्या गूँगे हो?
या भ्रष्टाचार में डूबे हो?
क्यों नहीं चिल्लाते भाई?
पसीना तेरा, मेहनत तेरी
चोर-राजा मिल खायें मलाई.....!
न अँधे, न बहरे, न गूँगे हो,
फिर किस दासता में जकड़े हो?
चुन-चुन कर उठा लो शब्दों को,
साहस, सत्य, जोश बना लो हमको,
चुन लो वो शब्द जिनमें है धार,
बनाओ हमें अपनी तलवार,
ले लो हिम्मत को, फूँको ललकार,
तुम जड़ता तो छोड़ो, हम करेंगे वार....!!!

डॉ. भारत लोहानी
सिविल अभियांत्रिकी विभाग

क्या आज मैं शिक्षित हुआ ?

शब्दों और सूचनाओं के चक्रव्यूह में जकड़ा हुआ,
शब्द के अर्थ से अनभिज्ञ हुआ।
चक्रव्यूह में सहज प्रवेश, मुक्ति मार्ग में बाधाएं विशेष
सत्य देखने की क्षमा का अप्राप्य ह्रास हुआ।
क्या आज मैं शिक्षित हुआ?

धर्म भूला, कर्म भूला,
जीवन जीने का मर्म भूला।
अर्थ सम्मान पाने की अंध-स्पर्धा में,
स्वयं से मैं दूर हुआ।
क्या आज मैं शिक्षित हुआ?

अज्ञात को जानने की सहज जिज्ञासा,
प्रकृति का मानव को वरदान।
हो मात्र यत्न इतना,
किस विधि हो इसका उत्थान।
प्रश्न पूछने की प्रवृत्ति का, सुनियोजित विनाश हुआ।
क्या आज मैं शिक्षित हुआ?

अपने पोषण हेतु, दूसरे का शोषण लगे न्याय-संगत
निज-सफलता का पैमाना, पर-विफलता पर हुआ आश्रित
सर्वे भवन्तु सुखिन: भुलाकर,
सर्वाइवल ऑफ दि फिटेस्ट का जय-जयकार हुआ
क्या आज मैं शिक्षित हुआ?

आशीष भटेजा, छात्र
यांत्रिक अभियांत्रिकी विभाग

मैं, आपका मनभावन

आज मैं बड़ी देर तक सोना चाहता था लेकिन साथियों की तेज पीयू-पीयू की आवाज से नींद टूट गई। बड़ी अलसाई सी सुबह है। मैंने अंगड़ाई ली और उड़कर लॉन में आ गया, वहाँ का निरीक्षण किया अभी भी कहीं-कहीं होली के रंग पड़े हैं, माली ने कुछ क्यारियाँ खाली छोड़ रखी हैं, कहीं-कहीं कोचिया लगा हुआ है। मुझे कोचिया का स्वाद पसंद नहीं है फिर भी मैंने कुछ पौधे कुतर डाले, अभी कुछ दिनों पहले कितने अच्छे फूल थे डहलिया, फ्लोक्स, सालविया आदि के छोटे छोटे पौधों का स्वाद अभी भी मुँह में हैं, वैसे तो आपके आँगन में मुझे खाने पीने की कोई कमी नहीं है और सामने वाली अनीता आंटी तो जब प्यार से मुझे मोनू-मोनू बुलाती हैं तो मैं दौड़ा चला जाता हूँ और उनके दिए सुस्वादु भोजन का आनंद उठाता हूँ पर ये फूल पौधे मुझे अधिक पसंद हैं आपको पता ही है कि आपके द्वारा लगाये तार, कांटे और जाल मुझे रोक नहीं पाते और मैं आपने मनपसंद पौधों का आनंद उठा ही लेता हूँ।

मैं उड़कर गैराज की छत पर जा बैठा, सुबह हो चली है, घूमने जाते लोग, पेपर वाला, दूध वाले, स्कूल जाते बच्चे, सबकी दिनचर्या शुरू हो गयी है। मैं मस्ती में टहलता हुआ गेस्ट हाउस की तरफ चल पड़ा। रास्ते में एक जगह खिले लिली के पौधों ने मन मोह लिया और गेस्ट हाउस के सुन्दर लॉन में तो मेरे पैर ही थिरकने लगे, मैंने देखा कुछ लोग मुझे हसरत से देख रहे हैं और फोटो भी खींच रहे हैं, उत्साहित होकर खूब नाचा, आप कैम्पस वाले लोग भले ही मुझसे कुछ उदासीन रहते हों पर बाहर से आने वाले लोग मुझसे बहुत प्रभावित होते हैं।

वहीं मेरा एक मित्र राधे मिल गया। उसके साथ मैं आगे नए बने छात्रावासों की तरफ बढ़ चला, इधर की चहल-पहल, "इट्स माई लाइफ" के सिद्धांत पर जीते-हंसते खिलखिलाते चेहरे मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। सामने कुछ लड़के-लड़कियाँ तेजी से साईकिल पर जा रहे हैं। अरे! इनके चेहरे इतने बुझे से क्यों लग रहे हैं? शायद कक्षा के लिए देर हो रही होगी, देर से उठे होंगे, नाश्ता भी नहीं किया होगा, ऊपर से शिक्षकों को इनसे अनेक शिकायतें रहती होंगी। अब इनकी तनातनी तो चलती रहेगी, मुझे क्या? पीछे से कुछ बातों की आवाज आई, शायद कोई चिंतित मम्मी अपने बच्चे से मेस के खाने के बारे में पूछ रही हैं। पहले तो मैं अकेले चलते लोगों को बात करते देख चौंक जाता था, पर अब समझ गया हूँ। सोचता हूँ, मेरे पास भी ऐसा छोटा सा फोन होता तो मैं भी तारा, मीरा से बात कर पाता। ये दोनों मेरी पुरानी सहेलियाँ हैं पर आजकर उधर हवाई पट्टी की तरफ रहने लगी हैं, पता नहीं उन्हें उधर की हरियाली पसंद है या उछलती कूदती नील गायें, सोचता हूँ उनसे आज मिल ही आऊँ।

फिर मैंने और राधे ने दिन में उधर ही मटरगश्ती की, खाया-पिया, हेल्थ सेंटर के सामने बने घरों, एसबीआरए में भी टहले। तभी राधे ने मंदिर में जाने की इच्छा व्यक्त की। हम टाइप-2 मंदिर की तरफ उड़ चले, रास्ते में रुके तो सामने से आते युवक को देखकर ठिठक गये। अरे! ये तो आलोक है, कितना बड़ा हो गया। कुछ दिनों पहले ही तो कितनी मस्ती से साइकिल चलाता हुआ स्कूल आता-जाता दिखता था। अरे पता है ये बच्चे मुझे नहीं पहचानते पर मैं सबको जानता हूँ। खुशी होती है इनको बड़े होते और अच्छे से सेटल होते देखकर, पर साथ में मुझे भी अपनी आयु का बोध हो जाता है। मंदिर का वातावरण तो सदा की भांति आनंददायक था ही, पर मुझे वहाँ आस-पास के घरों में करीने से लगे फूल-पौधे सब्जियाँ आदि भी बहुत अच्छी लगती हैं। वहाँ से हम 'पार्क-67' पहुँचे। शाम हो चली है कुछ लोग टहल रहे हैं, बच्चे खेल रहे हैं। हमने कुछ देर विश्राम किया फिर सामने भीड़ भरी सड़क पार कर दूसरी तरफ आ गये।

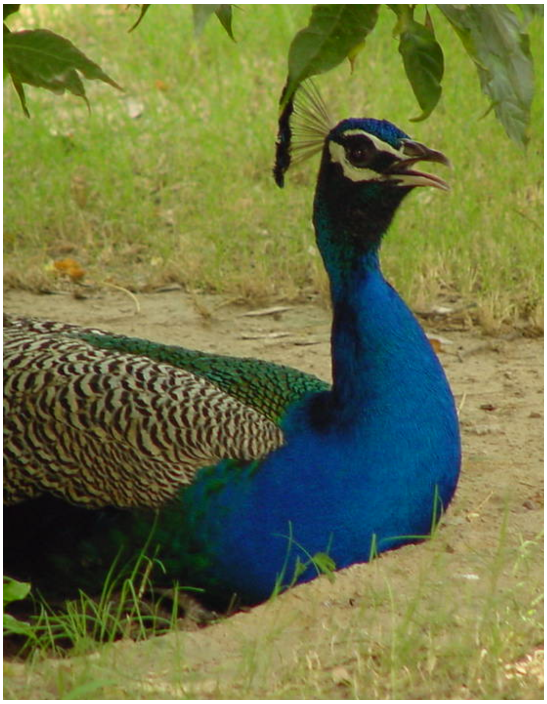

शॉपिंग कॉम्पलेक्स से आगे बढ़े तो देखा एक घर में खूब सजावट हो रही है, कुर्सी मेजें लग रही हैं, तो आज पार्टी है। क्या शानदार हो गयी हैं आजकल ये पार्टियाँ और हॉल-डे, अंतराग्नि हो या कोई और समारोह, क्या जोरदार रोशनी और संगीत होता है। मैं तो पास के पेड़ की किसी टहनी पर बैठ जाता हूँ और ढूँढ़ता रहता हूँ इन बच्चों के बीच पनपती हुई आत्मीयता को! मेरे ये बच्चे बहुत खुश रहते हैं। अब तो वे अपना पारंपरिक मोर-नृत्य भूलकर डिस्को की धुन पर थिरकते हैं, पर क्या करूँ, मना करूँगा तो भी तो नहीं मानेंगे। इसी को तो लोग "Generation Gap" कहते हैं न। आज कुछ अधिक ही सोच रहा हूँ।

अब क्या है कि आप बुद्धिजीवियों के साथ रहकर मैं भी तो दार्शनिक हो गया हूँ।

अंतत: हम तारा और मीरा के ठौर पर पहुँच ही गये। वे बहुत खुश हुईं और खूब आवभगत की। हमने बहुत सारी बातें की और अगले दिन टाइप-वन की तरफ रहने वाले कुछ मित्रों से भी होली मिलन की योजना बना डाली।

हम लोग फिर सबसे शुभ-रात्रि कह सोने चले गये। सच! आज तो सारा बदन दर्द कर रहा है। इतनी दूरी की उड़ान हम कभी-कभी ही तय करते हैं और अब संस्थान की तरह मैं भी बुजुर्ग हो गया हूँ। अरे! नहीं-नहीं, संस्थान तो चिर युवा है, यहाँ तो नित नए फूल प्रांगण में अपनी सतरंगी आभा बिखेरने आते रहें, यही कामना लिए........मैं आपका मनभावन मोर।

दीपा चंद्रा

नारी रत्न जीजाबाई

अचलोजी, रघोजी, यशवंत और बहादुर, ये चारो भाई लाठी भाँजने का अभ्यास कर रहे थे। तभी एकाएक पाँच वर्ष की सुंदर बालिका वहाँ आ धमकी और उनके बीच में अपनी लाठी चलाने लगी। अचलोजी ने कहा-भाग यहाँ से, हमें अपना अभ्यास करने दे।

रघोजी ने कहा – घर में जाकर गुड़िया को साड़ी पहनाने का अभ्यास कर।

बालिका बोली – मेरी सजी-सजाई गुड़िया को कोई उठा न ले जाय, इसकी भी तो मुझे चिंता करनी पड़ेगी।

यशवंत ने कहा – यह बालिका अवश्य है, पर बातों में मानने वाली नहीं है। एक लाठी इसके पैरों पर जमा ही देता हूँ।

बहादुर ने कहा – यही ठीक रहेगा। तब यह रोती-लँगड़ाती घर की ओर भागेगी व माँ की गोद में बैठ रहेगी।

बालिका ने कहा – मैं क्यों चोट खाऊँगी? मैं तो तुम्हारा हर वार बचाऊँगी और उलटे तुम पर प्रहार करूँगी। मैं भी लाठी चलाना अच्छी प्रकार जानती हूँ। चलो, आ जाओ चारों एक साथ , देखूँ तुम सबका करतब।

नन्ही बालिका चारों के बीच में घुस गयी और बहुत वेग से लाठी भाँजने लगी। वह कभी इस पर तो कभी उस पर वार करने लगी। चारों भाइयों ने उसे मारने का आवेशपूर्ण दिखावा किया परंतु व टस से मस नहीं हुई।

उसी समय पिताजी लखूजी जाधवराव वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने लपककर कन्या को उठाया और गले लगा लिया। कृत्रिम कोप से वे अपने पुत्रों को डाँटने लगे, तब पुत्रों ने एक साथ कहा – पिताजी आप इसे सामान्य न समझें। यह तो रणचंडिका है।

यही बालिका आगे चलकर शाहजी की पत्नी और छत्रपति शिवाजी की माँ जीजाबाई के रूप में प्रख्यात हुई। जीजाबाई ने बड़ी कुशलता से शिवाजी को सुसंस्कारित किया और उनके जीवन में स्वधर्म तथा स्वराज के प्रति अटूट निष्ठा स्थापित की।

महिला दिवस

यूँ तो प्रतिवर्ष 8 मार्च को मनाया जाने वाल अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है जिसे लगभग सभी विकसित व विकासशील देश सम्मान सहित मनाते हैं। परंतु नहीं मालूम कि भारत जैसे देश में जो दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा देश है और जहाँ स्त्री का सम्मान और उसकी सुरक्षा आज भी चिंता का विषय है, इसकी सार्थकता कितनी है? एक ओर उत्तरोत्तर प्रगति करता भारत जिसमें स्त्री सहभागिता महत्वपूर्ण है, वहीं दूसरी ओर उसी नारी शक्ति का निरंतर होता उत्पीड़न जो निश्चय ही अति निंदनीय है।

कहते हैं एक विकसित समाज के लिए समाज में रहने वाले लोगों की मानसिकता का विकास होना भी आवश्यक है। आज भारत के विकासशील से विकसित होने की गति भले ही अच्छी मानी जा रही हो लेकिन स्त्री जाति के प्रति भारतीय समाज की मानसिकता के परिवर्तन की गति कहीं ज्यादा धीमी है।

वर्ष 2012 में हुई कुछ घटनाओं ने समाज के सभी तबके के लोगों के मन और मस्तिष्क को झिंझोर कर रख दिया। सभी के मन में ये प्रश्न तो अवश्य उठा होगा कि जो हुआ, क्या वो ठीक था और क्या हमारी सामाजिक और न्यायिक व्यवस्था स्त्रियों के अनुकूल है? निश्चित तौर पर हमारी सामाजिक और न्यायिक व्यवस्था में परिवर्तन की आवश्यकता है। यह परिवर्तन यदि हमारे घरों से होकर समाज तक पहुँचे, तो अच्छा है। परिवर्तन एक ऐसे समाज के लिए, जहाँ हर एक स्त्री घर से बाहर होकर भी अपने घर जैसी सुरक्षा महसूस करे।

स्त्री सुरक्षा को लेकर चिंतित हमारी सरकार ने 'Anti-rape Bill' तो पास कर दिया है, पर यह कहना मुश्किल है कि यह कितना सार्थक सिद्ध होगा?

जब तक हमारे समाज की सोच नहीं बदलती, तब तक ऐसे कितने भी बिल क्यों न पास हो जाएं, उनका कोई महत्व नहीं।

तो आइए हम सब मिलकर अपनी सोच को थोड़ा और विकसित करें। स्त्री जाति को भी उतनी ही आजादी दें, जितनी कि पुरुष समाज को मिली है, साथ ही साथ एक मजबूत सुरक्षित समाज भी दें, जहाँ वो उन ऊँचाइयों को छू सके जिसकी वो हकदार है। क्योंकि सही मायने में विकसित समाज की कल्पना तभी की जा सकती है जब समाज के दोनों पहिये अर्थात् स्त्री और पुरुष बराबर एक दूसरे के साथ चलें। वस्तुत: विकसित देश की कल्पना स्त्री-पुरुष दोनों के समवेत विकास से ही की जा सकती है।

भारतीय संस्कृति में कहा भी गया है – **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता।**

सीमा यादव

उच्च तकनीकी शिक्षा संस्थानों के छात्रों पर मनोवैज्ञानिक दबाव के कारण और उनका निवारण

आई. आई. टी. और आई. आई. एम. जैसे देश के ख्यातिलब्ध उच्च शिक्षा संस्थानों को सभी एक विशेष सम्मान से देखते हैं और उनके द्वारा शिक्षा एवं शोध के क्षेत्र में किए जाने वाले योगदान को बहुधा सराहा जाता है। परंतु यह भी एक कटु सत्य है कि इन्हीं संस्थानों के छात्रों के बारे में अक्सर सुना जाता है कि उन्हें अत्यधिक मानसिक दबाव से गुजरना पड़ता है और उनमें से कुछ अवसादग्रस्त होकर भयावह स्थिति उत्पन्न कर देते हैं जिनकी परिणति कभी-कभी बहुत दुखद हो जाती है और तब सभी ओर से, चाहे वह संबंधित छात्र के परिवारीजन हों या समाजसेवी अथवा मीडिया, इन संस्थानों के तंत्र मे ढ़ेर सारी कमियाँ निकालते हुए इस दुखद घटना के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी सिद्ध करने का अभियान सा शुरू कर देते हैं और गलत बयानी एवं अनर्गल दोषारोपण की बौछार होने लगती है।

दरअसल यह लोगों का भ्रम है कि समाज के दूसरे अवयवों की तुलना में इन संस्थाओं में अधिक दुखद घटनाएँ होती हैं। सत्य तो यह है कि मीडिया अपनी TRP बढ़ाने खातिर इन संस्थानों में घटने वाले इक्का-दुक्का हादसों को सनसनीखेज बनाकर हफ्ते-दर-हफ्ते अनर्गल प्रलाप करने लगती है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि युवाओं का अवसादग्रस्त होना भी सामान्य घटना नहीं है और दुर्भाग्य से यदि अकाल मृत्यु जैसी घटना घट जाती है तो पूरे संस्थान का शैक्षणिक वातावरण अवसाद से घिर जाता है। वस्तुतः इसमें किसी प्रकार का भ्रम नहीं होना चाहिए कि संस्थान में ऐसी किसी भी स्थिति के उत्पन्न होने के पहले ही उसके कारण और निवारण का गंभीर प्रयास किया जाना चाहिए और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संबन्धित घटकों को समय रहते अपना योगदान देना चाहिए। प्रस्तुत लेख में इसी बात को ध्यान में रखते हुये मैंने इस अत्यंत नाजुक विषय पर अपने विचारों को पाठकों के विवेचनार्थ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

लिखने की आवश्यकता नहीं है कि आईआईटी जैसे संस्थानों में पढ़ने वाले छात्र कुशाग्र और परिश्रमी तो होते ही हैं परंतु बड़ी संख्या में वे भावुक भी होते हैं। सच तो यह है कि इनमें से बहुतों में मनोवैज्ञानिक दबावों की त्रासदी उनके स्कूल काल से शुरू हो जाती हैं जिसे निम्नलिखित रूपों में विभाजित करके एक सम्यक विचार करने की जरूरत है।

(क) आई. आई. टी. छात्रों में मनो-दबाव के कारण

1. माता-पिता द्वारा जनित कारण :

आज-कल की चकाचौंध में हर मध्यमवर्गीय शिक्षित माता-पिता की अपने बच्चों के प्रति महत्वाकांक्षाएं उनके बाल्य काल और स्कूल काल से ही बड़ी होने लगीं हैं। थोड़े भी सजग माता-पिता अपने बच्चे को नवीं कक्षा तक आते आते ही उसे डाक्टरी या इंजीनियरिंग की अंधी दौड़ में, चाबुक चला कर, दौड़ाना शुरू कर देते हैं। किसी हद तक ऐसा होना पूर्णतः अनुचित भी नहीं है परंतु माता-पिता को अपने बच्चे की बौद्धिक क्षमताओं का निष्पक्ष मूल्यांकन भी तो करना चाहिए। प्रत्येक बच्चा पढ़ाई में ही कुशाग्र हो, ऐसा जरूरी तो नहीं है; परंतु हर माता-पिता बस यही चाहते हैं कि उनका बच्चा आईआईटी या पीएमटी में सेलेक्ट हो जाये और उनके द्वारा निर्धारित मार्ग पर चलते हुए डॉक्टर या इंजीनियर ही बने। ऐसे माता पिता शायद यह भूल जाते हैं कि धरती का प्रत्येक व्यक्ति केवल पढ़ाई में ही सबसे तेज और अत्यधिक क्षमतावान तो नहीं हो सकता। उन्हें इस बात की ओर भी गौर करना चाहिए कि उनके बच्चे का रुझान किसी और क्षेत्र में तो नहीं है। जीवन में सफल होने के लिए केवल आईआईटी ही तो अकेला रास्ता है नहीं। सचिन तेंदुलकर, अमिताभ बच्चन, पंडित रविशंकर और धीरु भाई अंबानी किसी आईआईटी में नहीं पढ़े थे, पर वे सब केवल इसलिए जीवन में सफल हुए क्योंकि उन्हें वह सब कुछ करने दिया गया जिसमें वह सफल हो सकते थे। कहने का तात्पर्य है कि बहुत बार दुर्भाग्य यह होता है कि व्यक्ति को वह बनने ही नहीं दिया जाता जो वह बन सकता है। उसे जबरन वह बनाने की कोशिश की जाती है जो वह बनना नहीं चाहता या वो बनने की उसमें क्षमता नहीं होती। बस यहीं से व्यक्ति के अंदर मनोवैज्ञानिक दबाव बनने का बीजारोपण हो जाता है।

उपर्युक्त सारी बातों का सार यह है कि बच्चों में मानसिक दबाव का प्रथम कारण माता-पिता द्वारा उसकी वास्तविक क्षमताओं से अधिक आपेक्षाएँ रखना होता है और बच्चे द्वारा पढ़ाई में बहुत अच्छा परिणाम न ला पाने पर उसे निकम्मा घोषित कर दिया जाता है। यह प्रतिक्रिया ही उस बच्चे की सफलता में रोड़ा बन जाती है जबकि यही बच्चा किसी दूसरे क्षेत्र में बुलंदियाँ छूने की सामर्थ्य रखता है।अतः माता-पिता का यह दायित्व बनता है कि वे अपने बच्चे की अभिरुचि को गंभीरता से पहचानने का प्रयत्न करें और यदि आवश्यक हो तो विशेषज्ञ और परामर्शदाता की सहायता लें और फिर उसी के अनुसार उसको उपयुक्त दिशा में प्रोत्साहित करें। बच्चे को आईआईटी या सीपीएमटी की अंधी दौड़ में दौड़ाने का प्रयास न करें। अत्युत उसे उपयुक्त दिशा देकर पूरी लगन, निष्ठा, दृढ़ निश्चय के साथ परिश्रम के मार्ग पर प्रशस्त करें! लक्ष्य उसका अनुगमन करेगा।

2. सामाजिक अपेक्षाओं द्वारा जनित कारण :

कोई बच्चा अपने स्कूल के प्रारम्भिक काल में पढ़ाई में अच्छा करता है तो माता-पिता द्वारा अक्सर उस बच्चे की क्षमताओं का गुणगान किया जाता है। धीरे-धीरे बच्चे को यह महसूस होने लगता है कि “मैं समाज का एक घोषित महा-मेधावी हूँ।” अब वही बच्चा उच्चतर कक्षाओं में जब अपेक्षित नतीजा नहीं ला पाता तो समाज की नज़र में अपने को हीन भावना से

ग्रसित महसूस करने लगता है। कटु सत्य तो यह है कि समाज में किसी को न तो किसी दूसरे के बच्चे की चिंता होती है और न ही दूसरे के बच्चे से विशेष अपेक्षाएं होती हैं। परंतु बच्चों की स्वजनित सोच ही उन्हें मानसिक दबाव में डालती है और उनकी रही सही क्षमताओं को कुंद कर देती है। अतः मैं बच्चों को आगाह करना चाहूँगा कि वे सामाजिक अपेक्षाओं के काल्पनिक जाल से अपने को आजाद रखें और अपनी रूचि के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा निखारने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहें। अभिवावकों को भी उनकी इस प्रक्रिया में यथासंभव सहयोग देना चाहिए और कम से कम अवरोध तो नहीं बनना चाहिए। सदैव याद रखिये कि ईमानदारी और पूरे परिश्रम के साथ अपने रुचिकर क्षेत्र में किया गया प्रयास कभी निष्फल हो ही नहीं सकता और यही सफलता की कुंजी है।

3. छात्र द्वारा स्वौत्पन्न कारणः

बहुत बार यह देखा जाता है कि छात्र स्कूल-काल में जो पढ़ाई करते हैं वह केवल एक कक्षा पास करके अगली कक्षा में पहुँच जाने के लिए ही की जाती है परन्तु वे अपनी मुख्य मंजिल तय नहीं करते। जब तक लक्ष्य तय नहीं करोगे तीर किधर चलाओगे? बगैर लक्ष्य तय किये अर्जुन जैसे धनुर्धारी की तपस्या भी किसी मतलब कि नहीं हो सकती थी। मेरा ऐसा मानना है कि तथाकथित कोचिंग केन्द्रों में पढ़ने वाले छात्रों में बहुत संख्या ऐसे छात्रों की होती है जो या तो इसलिए पढ़ रहे होते हैं क्योंकि उनके माँ-बाप यही चाहते हैं या इसलिए कि उनके कई सहपाठी वहाँ पढ़ने जा रहे हैं। उनका अपना स्वयं का कोई लक्ष्य नहीं होता। वस्तुतः यही छात्र बाद के जीवन में असफल होने पर मनोवैज्ञानिक दबावों के शिकार होते हैं और कुंठाग्रस्त जीवन जीने के लिए अभिसप्त होते हैं।

(ख) आईआईटी में प्रवेश के तुरंत बाद मनोदबाव के कारण

1. नये परिवेश जनित कारण

1- नए संस्थान परिवेश द्वारा जनित कारण जब कोई छात्र/छात्रा अपने स्कूली जीवन के बाद आईआईटी जैसे विशाल संस्थान में प्रवेश लेता/लेती है तो उसके अंदर निम्न कारक प्रभावी होते हैं-

- पहली-पहली बार माता-पिता और घर से दूर आना
- नए-नए विभिन्न भाषा-भाषी छात्र-छात्राओं का साथ
- एक नई स्वछंदता का स्वाद जो अचानक पैसा, मित्रता,पढाई,खाना, पीना, सोना, जागना, घूमना, फिरना सभी क्षेत्रों में हासिल हो जाती है
- कहीं न कहीं रैगिंग के प्रति अंतर्मन में बैठा भय
- अकादमिक पाठ्यक्रमों का तेजी से प्रवाह
- पढाई में अति मेधावी सहपाठियों से प्रतिस्पर्धा

यह आखिरी बात अति महत्वपूर्ण है जो छात्र अपने स्कूली जीवन में स्कूल या जिले का टॉपर रहा हो, वह अब चालीस अति मेधावियों बच्चों के बीच अपने को पिछड़ता हुआ पावे तो उसका आत्मविश्वास डोलने लगता है। मैंने

NORTHERN BLOCK
LABORATORIES

कई मेधावी किन्तु भावुक छात्रों को इसी कारण से अवसादग्रस्त होते देखा है। एक बार कक्षा में पिछड़ जाने के बाद, नए परिवेश में होने के कारण, संकोच और अपने घटते आत्मविश्वास के कारण वे शिक्षकों एवं अन्य सहपाठियों से अपनी अध्ययन-संबंधी समस्याओं पर बातचीत नहीं कर पाते और नतीजतन और पिछड़ते ही चले जाते हैं।

2. अभिभावकों द्वारा जनित कारणः

इसका कुछ अंश ऊपर उद्धृत किया जा चुका है मैं कुछ विशेष बातें और कहना चाहूँगा। अपने लाड़ले से दिन में कई-कई बार बात करना माता-पिता द्वारा उत्पन्न एक विशेष समस्या है। अम्मा सुबह, दोपहर, शाम जानना चाहती है कि बेटे ने खाना खाया कि नहीं, मेस में खाना कैसा बना था?, जुखाम की दवा खाई की नहीं?, रात को कितने बजे सोया?, सुबह कितने बजे जगा?, टेस्ट और क्विज कैसा हुआ?, रूम-पार्टनर कैसा है इत्यादि-इत्यादि? हजारों किलोमीटर दूर से ही (उसकी समस्या समझे बगैर) उसे उलाहना दी जाती है कि अब वह क्लास में क्यों पिछड़ रहा है और पहले जैसा टॉपर क्यों नहीं रहा इत्यादि? आईआईटी के प्रथम वर्ष में पढ़ रहे छात्रों में मनोवैज्ञानिक दबाव बढ़ने का यह एक विशेष कारण होता है। माता-पिता को चाहिए कि अपने बच्चे को इस वात्सल्य-जाल से मुक्त करें और उसे अपने पंख फैला कर अपने अध्ययन-जगत में उड़ने दें।

3. आई. आई. टी. के प्रवेश में आरक्षण की वैधानिक बाध्यताः

मै इस विषय की तार्किकता या औचित्य पर कोई टिप्पणी नहीं करना चाहूँगा परंतु अपने उन नवागंतुक छात्रों को सजग करना चाहूँगा जो सामाजिक रूप से अति पिछड़े क्षेत्रों, विपन्न परिस्थितियों में स्कूली-शिक्षा लेने के उपरांत आरक्षण के आधार पर आई आई टी में प्रवेश पा कर आते हैं। दुर्भाग्य से यदि ऐसे छात्र कभी-कभी अपने अभीष्ट को पाने में असफल हो जाते हैं तो समूचे तंत्र को जातिगत आधार पर दुराग्रही और विद्वेषपूर्ण सिद्ध करने में लग जाते हैं एवं उनके इस कृत्य में उनके माता-पिता एवं जाति की राजनीति करने वाले तथाकथित समाजसेवी नेता भी उनका पूरा साथ देने लगते हैं। मेरी अवधारणा यह है कि ऐसे बच्चों की एक मूलभूत कमजोरी उनका अँग्रेजी भाषा बोलने और समझने की क्षमता में कमी और उनकी संवाद-कला में कमजोरी होती है, न की उनकी आर्थिक विपन्नता या किसी जाति विशेष का होना। क्योंकि मैंने कई साधारण बौद्धिक क्षमता एवं कमज़ोर अकादमिक रिकॉर्ड वाले इसी ग्रुप के छात्रों को आत्मविश्वास से भरा हुआ और आई आई टी में बहुत अच्छा प्रदर्शन करते हुए भी देखा है। यह भी बताना आवश्यक है कि आई आई टी जैसे समग्र सोच वाले संस्थान में ऐसे कमज़ोर छात्रों की सहायता के लिए ऐसी भरपूर सुविधाएं उपलब्ध हैं जिनसे वे लाभ उठा सकते हैं। अंग्रेजी के साथ-साथ विदेशी भाषाओं को समझने, बोलने और लिखने की प्रवीणता हेतु वे शुरू से ही क्लास ज्वाईन कर सकते हैं ऐसा करके वे भाषा संबंधी तमाम किस्म की कमजोरियों से निजात पा सकते हैं।

उपर्युक्त तथ्य से एक बात और निकलती है कि राष्ट्रीय-स्तर पर प्राथमिक स्कूली शिक्षा के समय से ही यदि बच्चों में भाषायी-ज्ञान और संवाद-कौशल को बढ़ाने के लिए समग्र प्रयास किया जाये तो ग्रामीण परिवेश और कमजोर आर्थिक स्तर के विद्यार्थी भी अपने आत्मविश्वास के बल पर जीवन में ऊंची सफलता हासिल कर सकते हैं।

(ग) वरिष्ठ छात्रों में मनोदबाव के कारणः

1.व्यक्तिगत कारणः

वरिष्ठ छात्रों में मनोदबाव उपजाने में व्यक्तिगत कारण ही ज्यादा उत्तरदायी होते हैं। ऐसे छात्र कुछ वर्षों तक आई आई टी में पढ़ने के बाद उत्साही और स्मार्ट बन जाते हैं और प्रतिकूल परिस्थितियों को झेलने में माहिर हो जाते हैं। बहुतेरे 5-6 सी पी आई पाने वाले औसत छात्र भी अपनी दूसरी विशेषताओं और क्षमताओं के कारण अपने व्यक्तित्व को निखार लेते हैं और उच्चतम सफलता की ओर अग्रसर हो जाते हैं। वस्तुतः विद्यार्थियों का यही वर्ग है जिन्होंने सफलता के नए-नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। अति मेधावी तो अपने ईश-प्रदत्त बुद्धि-कौशल से वैसे ही सफल होने के अधिकारी होते हैं। लेकिन जब कोई संस्था औसत व्यक्ति की क्षमताओं को निखार कर सफलता की कहानी गढ़ती है तो वह रोमांचकारी कहानी होती है।

2.काल्पनिक जगत में विचरण

प्रथम वर्ष से ही मनोदबावों के कुचक्र में फंसने के बाद अपने को असफल और हीन समझने वाले कुछ छात्र, बाद के वर्षों में मस्ती में जीने लगते हैं। आज के युग में पूरे विश्व के युवा वर्ग और विशेषकर छात्र 'वर्चुअल दुनिया' में ज्यादा समय गुजारने लगते हैंः फेसबुक और ट्विटर में रहना उनकी आदत बन जाती है पर इसके ठीक विपरीत असली जीवन में मन और भावनाएं तो वर्चुअल होती नहीं बस यही विरोधाभास उनमें मानसिक द्वंद और तनाव उपजाता है। मै पुनः स्मरण कराना चाहूँगा कि ऐसी स्थितियों का बीजारोपण आई आई टी में प्रवेश के तुरंत बाद के समय की स्थितियों का उचित तरीके से समाधान न करने के कारण होता है और कई बार अच्छे बच्चे दयनीय स्थितियों में पहुँच जाते हैं।

3.अकादमिक असफलताः

अकादमिक असफलता नैराश्य का एक प्रमुख कारण होती है। छात्रों की असंयमित दिनचर्या, गलत आदतें, आत्मविश्वास में कमी एवं कई बार भविष्य के प्रति अनिश्चितता पनपते नैराश्य को गंभीर अवस्था तक पहुँचा देती हैं जिसके कभी-कभी बहुत दुखद परिणाम हो जाते हैं। इन्टरनेट का नशा और दूसरे प्रकार के व्यसन भी इस समस्या का कभी-कभी कारण भी होते हैं और कई बार परिणाम भी।

4. पारिवारिक:

पारिवारिक उलझनें सभी को परेशान करती हैं परंतु छात्रों के अपरिपक्व

डॉ. ओमप्रकाश मिश्र
प्रमुख चिकित्साधिकारी

इस देश के लिए

सोचता और जीता है हर कोई अपनों के लिए,
उन्नति एवं प्रगति की हर पल अभिलाषा लिए,
पर किसी ने कभी सोचा अपने वतन के लिए,
हाय रे! दुर्भाग्य, न सोचा कभी इस देश के लिए ।

संविधान ने कुछ मौलिक कर्तव्यों की अभिलाषा कर,
हम देशवासियों को मौलिक अधिकार दिये,
पल-पल लड़ते सभी इन अधिकारों को पाने के लिए,
पर क्या किसी ने कभी कर्तव्य भी पूर्ण किए
हाय रे! दुर्भाग्य, न सोचा कभी इस देश के लिए ।

आवाम ने प्रजातंत्र में नेता तमममाम चुन दिये,
देश सेवा उन्नति की आड़ में बस घोटाले किये,
सोचा था ये है देश सेवा, उन्नति के लिए,
योजना के तहत देश के संसाधन खोखले किये
हाय रे! दुर्भाग्य, न सोचा कभी इस देश के लिए ।

नारी सम्मान को कलंकित कर उस पर अत्याचार किये,
वह देवी तुल्य नारी आज चिंतित स्व-सम्मान के लिए,
उस की सुरक्षा सम्मान अब चिंता का विषय देश के लिए,
भ्रष्टाचार अत्याचार ने माहौल बिगाड़ा सब के लिए ।
हाय रे! दुर्भाग्य, न सोचा कभी इस देश के लिए ।

देश के स्वयंभू कर्णधार नेताओं के हाल की
हर पल खुद की हिफाजत की चिन्ता लिए
भयवश खुद को सुरक्षा के घेरे में लिए,
क्या दे पायेंगे वे सुरक्षा अवाम के लिए
हाय रे! दुर्भाग्य, न सोचा कभी इस देश के लिए ।

सोचो उन माताओं की जिन्होंने देश रक्षा हेतु
अपनी कोखों से जाँबाज सिपाही दिये,
रहते हर क्षण सजग देश की सरहद के लिए,
हर पल रहें तत्पर प्राण न्यौछावर करने के लिए,
खुद उठाते खतरे ताकि देशवासी चैन से जियें ।

यही सब हैं कठोर सत्य हम सभी के लिए
क्या, क्यों और कैसे? सोचे हम इस देश के लिए ।

मनमोहन सखूजा
विधि एवं जनसूचना प्रकोष्ठ

मेघ

चांदी जैसे धवल शिखर में
मोती जैसे कण बनकर,
सब मोती मिल एक हुए जब
छाए तुम बादल बनकर।
जन्म हुआ सागर के जल से
बना रूप तब उच्च शिखर से,
नभ पर जाकर मेघ बने
बने धरा के प्रेमी से।
मेघ गर्जना नभ में होती
मोरों के स्वर गूँज उठे,
मेघों से है प्रीत घनेरी
देख मोर सब नाच उठे।
जैसे सुंदर पंख हमारे
वैसी सुंदर धरा करो तुम,
जैसे होते नृत्य हमारे
वैसे सुंदर गीत भरो तुम।
क्यों छाए हो तुम अंबर में
चाह मेरी केवल है तुझ में,
गर्जन करो न रहकर नभ में
नृत्य करूँ मैं तेरे संग में।
उड़कर आये दूर गगन से
आ कर थोड़ा दम भर लो,
प्यासी धरती राह निहारे
आकर अपने उर भर लो।
चकवा, चकवी और पपीहा
सभी तुम्हारी राह निहारें,
वृक्ष लताएं सूख रहीं सब
उन के तन भी तुम्हें पुकारें।
डरो नहीं उस ढीठ पवन से
रोक रहा जो तुम्हें राह में,
आ जाओ तुम यहाँ गगन से
तोड़ पवन का दंभ राह में।
तुम प्रेमदूत, तुम मेघदूत
तुम हो धरा के प्राण दूत,
तुम हो जलधि के वाष्प पुंज
तुम से जीवित हैं सभी कुंज।
रूप बदल जब पिघल गए तुम
मिटा दिया अपना आकार,
धरती के आँचल में आकर
सुखी किया उसका संसार।
संचय की नहीं वृत्ति मेघ में
कर्मठ वेग से चलता है,
अपनी सारी देह लुटा कर
शीतल सबको करता है।
कैसे करूँ नमन मैं तेरा
कब तू कहाँ ठहरता है,
आवारा प्रेमी बन कर
अनवरत डोलता रहता है।

पूजा मिश्रा

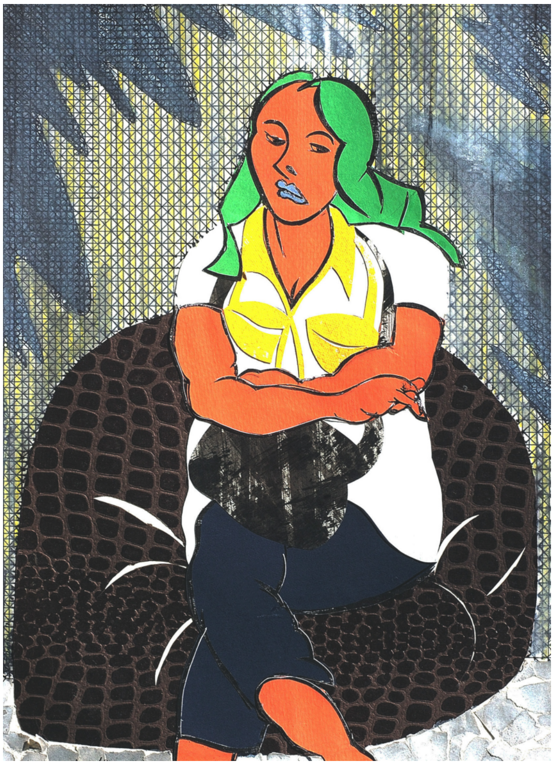

चित्रकारी- वन्दना कोठारी

आत्ममंथन

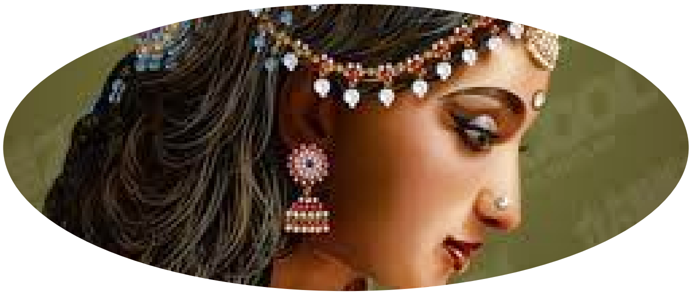

मेरा मन पिछले कुछ दिनों से परेशान हो रहा था। अखबार पढ़ने से एवं टी. वी. समाचार देखने से वह परेशानी और बढ़ जाती थी। एक दिन ख्याल आया कि क्यों न इस समस्या को कागज पर उकेर दिया जाए, शायद मन कुछ हल्का हो जाये।

मेरी परेशानी का मुख्य कारण है यौन शोषण के समाचार, चाहे देश की राजधानी हो, महानगर मुम्बई हो, मध्यप्रदेश की उद्योग नगरी इंदौर हो या एक छोटा सा गाँव।

अब पता चल रहा है कि यह बीमारी हर जगह फैली हुई है। यह बीमारी पहले भी फैली हुई थी, बस अंतर इतना है कि पहले इस बीमारी का खुलासा समाज के डर से नहीं होता था लेकिन अब दिल्ली की शर्मनाक घटना के बाद दोषियों को सजा दिलाने की दृष्टि से और आगे ऐसी घटनाएं न हों, इसकी आशा से स्वयं पीड़ित एवं उसके घर वाले पुलिस के पास जाने लगे हैं, लेकिन लगता है कि डॉक्टर या पुलिस के पास इसका इलाज ही नहीं है या करना ही नहीं चाहते क्योंकि इस बीमारी के बड़े-बड़े वायरस इन्हीं के संरक्षण में पलते हैं, इन्ही के चारों ओर फैले हुए हैं।

आज सुबह के कुछ कार्यों से निवृत्त होकर टी वी खोला तो समाचार आ रहा था कि इंदौर में सात साल की बच्ची के साथ उसी के चाचा ने यौनाचार किया और अंततः उस बच्ची की मौत हो गई। इसमें बच्ची की चाची ने भी सहयोग किया। चाचा को फाँसी और चाची को आजीवन कारावास की सजा तीन महीने के रिकार्ड समय में सुनायी गई। समाचार सुनकर मन बहुत व्यथित हो गया, टी वी बन्द किया और समाचार पढ़ने बैठ गई वहाँ भी पहले ही समाचार में था एक अधेड़ व्यक्ति गिरफ्तार।

कुछ दिनों से इन समाचारों को देखकर एवं पढ़कर मन बहुत व्यथित हो जाता है। मन इस समस्या की जड़ को ढूँढ़ने को व्याकुल हो गया, तब प्रश्न सामने आया कि क्या इसमें माता-पिता की कोताही है या माता-पिता बच्चों को ठीक ढ़ंग से संस्कारित नहीं कर रहे हैं या आज की भागदौड़ वाली जिंदगी में माता-पिता के पास समय ही नहीं होता यह देखने का कि बच्चे क्या सही कर रहे हैं और क्या गलत?

आजकल बच्चे अधिकांश समय आया के साथ गुजारते हैं। माँ-बाप दोनों काम करते हैं, अतः वे तो बच्चों से शाम को ही मिल पाते हैं लेकिन तभी एक टी वी चैनेल का समाचार दिमाग में कौंध गया जिसमें बताया कि एक बाप ने अपनी ही 6-7 साल की बच्ची के साथ दुष्कर्म करने का प्रयास किया। आजकल वो श्रीमान जेल की हवा खा रहे हैं।

आजकल तो दामिनी कांड की चर्चा सभी जगह है फिर वह चाहे गली-कूंचा हो या संसद दामिनी को भारत एवं अमेरिका ने सम्मानित भी कर दिया। मुझे लग रहा था कि इस बार तो अवश्य दोषियों को कड़ी सजा मिलेगी फिर चाहे वो बड़े साहब लोगों के बेटे हो या बड़े नेता जी के? अभी कुछ दिनों से यह मंथन चल ही रहा था कि एक न्यूज चैनेल की प्रथम खबर में एक दिन समाचार सुनने को मिला कि इस कांड के मुख्य आरोपी ने फाँसी लगाकर आत्महत्या कर ली। इसी बात को लेकर टी वी पर बड़ी बहस चल रही थी। मेरे दिमाग में एक प्रश्न कौंधा कि यह आत्महत्या है या कुछ लोगों को बचाने के लिए हत्या? खैर ! फिर मेरे मन में विचार आया कि यह निर्णय तो हमारे माननीय न्यायाधीश महोदय को करने दें, मैं क्यों अपना सिर खपाऊँ?

एक दिन एक बाई की आप-बीती पढ़कर बहुत ही दुख हुआ वो एक बंगले में काम करती थी। एक दिन मालिक के बेटे की जन्मदिन पार्टी थी, अतः घर लौटने में काफी देर हो गई। मेमसाहब ने बाई को कहा कि रात बहुत हो गई है, आज रात तुम यहीं सो जाओ, कल सुबह चली जाना। लेकिन बच्चों और पति के बारें में सोचकर उसने मना कर दिया और वह अकेली ही रात को लगभग एक बजे अपने घर चल दी, थोड़ी ही दूर चलने के बाद वह देखती है कि चार लोग शराब के नशे में धुत उसकी ओर चले आ रहे थे उसको कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे? वह वहाँ से भागने का कुछ प्रयत्न कर पाती, इसके पहले ही उन दुष्टों ने आकर बाई को घेर लिया उसके बाद उसके साथ वही हुआ जिसकी उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। वो चारो उसको वहीं छोड़कर अंधेरे में लुप्त हो गये। धीरे-धीरे कदमों से वह अपने घर की ओर असहाय स्थिति में चल दी। घर पर सभी लोग सो चुके थे। वह भी बिना आवाज किये सोने के लिये चली गयी । पर उस घटना के बारे में सोचते एवं करवट बदलते ही उसने रात गुजार दी।

अगले दिन उसके पति ने पूछा तो देर से आने की बात कहकर चुप हो गई।

उसको पता था कि रात्रि की घटना यदि उसको बता दी तो वह उसे मारपीट कर घर से निकाल देगा।

मैं सोचती हूँ कि बाई की क्या गलती थी? क्या इस देश में एक औरत अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए काम भी नहीं कर सकती? क्या वह काम करने के बाद सुरक्षित घर नहीं लौट सकती? यदि ऐसा है तो यह कैसी स्वतंत्रता है? कैसा जनतंत्र है?

मुझको लगता है यौन शोषण, छेड़छाड़, लड़कियों पर तेजाब फेंककर उन्हें बदसूरत करना, धमकी भरे एसएमएस करना इत्यादि घटनाएं इस देश में महामारी का रूप लेती जा रही हैं। समझ में नहीं आता, इन सबका इलाज क्या है? क्या नए-नए कानून बनाने से समस्या हल होगी? क्या पुलिस को ट्रेनिंग देने से समस्या हल होगी? क्या माँ-बाप को अपने बच्चों में अच्छे संस्कार डालने की सलाह से समस्या हल होगी? मैं इसी उधेड़बुन में बैठी सोच रही थी कि समस्या का हल क्या हो सकता है तभी मेरी पोती अपने पापा की एक कमीज ले आयी जिसमें दर्जनों छेद हो गये थे। वह कहने लगी, मैं पापा की कमीज पहनूंगी। मैं उसके निष्कपट दिल से निकली इच्छा और उस कमीज की स्थिति को देखकर अपनी पोती की ओर प्रश्नभरी निगाहों से देखने लगी। मैं शायद उससे कहना चाह रही थी कि बेटा ये समस्या इतनी आसान नहीं है इसके हल के लिए गहन आत्म मंथन की आवश्यकता है। इसमें एक या दो छेद नहीं हैं जिसे मैं सिल दूँ, इसमें दर्जनों छेद हैं कोई दक्ष दर्जी ही ठीक कर सकता है और मैंने इतना कहकर उसको खेलने की सलाह दे डाली।

कांति जैन

कैसे निबहैं निबल जन, करि सबलन सों गैर।
रहिमन बसि सागर विसै, करत मगर सों बैर।।

कमजोर लोगों को ताकतवरों से दुश्मनी नहीं करनी चाहिए। रहीम कहते हैं, समुद्र के पानी में रहकर मगरमच्छ से दुश्मनी मोल नहीं लेनी चाहिए, क्योंकि पानी ही तो मगर की असली ताकत है। वहाँ तो आपकी हार निश्चित है।

रहीमदास

गाँव की याद

मेरे गाँव में वह पीपल की छाँव
बैठते थे जहाँ दादा-दादी और ताऊ,
जिसमें पूजा की लाल डोरी
बांधी थी नानी ने
मेरी ही रक्षा और लंबी उम्र के लिए
बरसात में जब पानी भर जाता था
यारों दोस्तों का जमावड़ा लग जाता था
छज्जों पे बैठके नाव कागज की चलाते थे
भीगते थे और उसी कीचड़ में नहाते थे
कबाड़ी वाला जब जामुन बेंचने आता था
हम पुराना लोहा, प्लास्टिक ढूँढ़नें में लग जाते थे
बदले में मुट्ठी भर जामुन को ले
झटपट छत पर चढ़ जाते थे
घनघोर दुपहरी में जब घर वाले सो जाते थे
हम कुल्फी वालों की पों-पों पर ध्यान लगाते थे
न जाने कब से बचाई उन अठन्नियों को लेकर
नंगे पाँव ही भागकर जाते थे
पर आज न वो पेड़ है
नो वो बारिश का पानी
न जामुन में वो मिठास है
न कुल्फी में वो स्वाद है
न दोस्त अब वैसे मिलते हैं
सब आरामदेह घरों में बंद रहते हैं
संसार आज बस कृत्रिम मनोहर दुकान है
यानी आधुनिकीकरण के यही नुकसान हैं

आकांक्षा राना, छात्रा

जब मैं था तब हरि नहीं, ■ ■ ■ ■ ■ अब हरि हैं मैं नाहि

मेरा जन्म एक ठेठ सनातनी परिवार में हुआ। बचपन से ही पूजा, अर्चना के वातावरण में पली-बढ़ी। माँ को गीता, रामायण पढ़कर सुनाती थी। डरपोक बहुत थी, इसलिए हनुमान-चालीसा, शिव-चालीसा का पाठ किया करती। सोमवार का व्रत बड़े नियम से करती थी। भय के कारण तरह-तरह की भ्रांतियाँ मन में भर गई थीं। विवाह आर्यसमाजी परिवार में हुआ और फिर धीरे-धीरे उसी रंग में रच-बस गई। हवन के मंत्रों से ही दिन का आरम्भ होता था, यूँ तो पूजा-पाठ सब वही था, पर ढँग बदल गया था और यूँ ही जीवन के सात दशक बीत गये।

एक दिन अचानक मेरा परिचय एक ऐसे परिवार से हुआ जो हमारी ही तरह साधारण जीवन जीता था, परन्तु अध्यात्म उनमें रचा-बसा था। उनसे कुछ पुस्तकें लेकर मैंने भी पढ़ीं और बताने पर ध्यान भी करने लगी, धीरे-धीरे मेरी रुचि इधर-उधर से हट कर उन्हीं बातों में बढ़ने लगी और अब तो मेरा जीवन ही बदलने लगा। उस परिवार का आभार मैं जीवन पर्यन्त नहीं भूलूँगी क्योंकि उन्होंने मेरा परिचय मुझसे करवाया।

पहले उपन्यास बहुत पढ़ती थी किन्तु अब तो आध्यात्मिक पुस्तकों में ही मन लगता है भले ही कई बार पढ़ लूँ, हर बार नई बात समझ में आती है। पहले क्रोध बहुत आता था, पर अब धीरे-धीरे सहनशीलता आती जा रही है। मन की चंचलता जो पहले बहुत थी, अब कम होती जा रही है। नियमित अभ्यास (ध्यान) अब मेरे जीवन का महत्वपूर्ण अंश बन गया है। सुबह ध्यान से ही प्रारम्भ होती है, विचार आँधी की तरह आते हैं किन्तु उसी तरह लौट जाते हैं। वास्तव में विचार निकलने के लिए ही आते हैं, उन पर ध्यान न देने पर बिना पानी दिये पौधों की तरह मुर्झा जाते हैं, धीरे-धीरे अहम् में कमी आने लगती है, हृदय में प्रकाश फैलने लगता है, सतत् हरि-स्मरण में रह कर जो भी कार्य करो सफलता मिलती ही है, इतना ही नहीं कार्य भी हमारे जाने बिना स्वत: होने लगते हैं। कई ऐसी बातें हैं जिनका समाधान बहुत सोचने पर भी नहीं सूझता, पर ध्यान के समय अचानक ही प्राप्त हो जाता है:

दिल में हैं तस्वीरे यार! बस, जरा गर्दन झुकाई देख ली ।

ऐसी सरल विधि अपने स्व से जुड़ने के लिए उम्र के इस ढलान पर प्राप्त हुई। ईश्वर सरल है, उसे सरल रीति से ही समझना होगा। अपने इस स्व (ईश्वर) को प्राप्त करने के लिए अपने मन में बनाई दुनिया (जिसने उसे आच्छादित कर रखा है) को समाप्त करना होगा, अपने अंदर की उस दिव्यता को उजागर करने के लिए अपने द्वारा बनाई सृष्टि समाप्त करनी होगी और तभी ईश्वर के द्वारा बनाई सृष्टि अर्थात् प्रकृति के साथ जीवन जी सकेंगे। कभी अकेलापन नहीं महसूस होगा क्योंकि यह दिव्यता सदा हमारे साथ है। पूर्व के संस्कारों को भोगने के लिए ही जीवन मिला है यह हमें स्वयं ही भोगने होंगे। आध्यात्मिकता में कोई चमत्कार नहीं होता, उससे केवल सम्बल प्राप्त होता है। सबकी भलाई, सबसे प्रेम और प्रकृति की समीपता का भाव उन्नति के उस पद पर ले जाता है जिसे शब्द व्यक्त नहीं कर सकते। यद्यपि बचपन से किया हुआ पूजा-पाठ सब आसानी से नहीं छूटता पर पाँच, छ साल में सब छूट गया। अब जब वो हमारे अंदर है तो डर भी समाप्त हो गया। अतः बाहरी द्वार बंद करके भीतर की ओर झाँको। अपने भीतर झाँकने से अनूठा अनुभव होता है, ऐसा अनुभव जिसको व्यक्त करने के लिए शब्द नहीं होते, बस केवल परम आन्नद की अनुभूति होती है। जब सारे संसार के प्राणी अपने लगने लगें, अजनबीपन का एहसास खतम हो जाए, चारों तरफ मित्र ही मित्र दिखाई पड़ने लगें, तब समझो कि तुमने प्रेम को पा लिया और जिसने प्रेम पा लिया उसे परमात्मा के द्वार की कुंजी मिल गई, उसे फिर और कुछ पाने को शेष नहीं रह जाता ठीक उसी तरह जैसे:

अकथ कहानी प्रेम की, कछू कही न जाय।
गूंगे केरी सरकरा, खाइ और मुसकाय।

अब तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कोई हर क्षण हमारे साथ है और हर कठिन परिस्थिति में हमारी शक्ति बनकर हमें आगे-आगे बढ़ा रहा है। अब हर समय ऐसी अनुभूति होती है कि :

प्रेम-गली अति सांकरी, तामें दो न समाहिं।
जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।

सरल भटनागर

हिंदी साहित्य सभा

हिंदी साहित्यसभा : क्यों एवं क्या?

यह महज संयोग नहीं है कि कानपुर खड़ी बोली हिंदी के आदि क्षेत्रों में से रहा है खड़ी बोली के प्रारंभिक काल यानी भारतेंदु हरिश्चंद्र के जमाने में प्रतापनारायण मिश्र यहाँ से 'ब्राह्मण' पत्रिका का संपादन करते थे| आजादी के संग्राम में गणेश शंकर विद्यार्थी तमाम नामों से अपनी कवितायेँ और लेख यहीं से लिखकर छापते थे, जो क्रांतिकारियों में जोश भरता था। इस भूमि से हिंदी साहित्य के कई बड़े हस्ताक्षर जुड़े रहे है। ऐसी साहित्यिक परंपरा वाले शहर में स्थित इस संस्थान के अन्दर हिंदी को समर्पित किसी संस्था का न होना अस्वाभाविक एवं असंभव था। परिणाम स्वरूप हिंदी साहित्य सभा की अवधारणा ने जन्म लिया। वर्तमान में यह सभा एक उत्साही और कर्मठ छात्र समुच्चय के रूप में हिंदी को और सामर्थ्य-शालिनी बनाने को प्रतिबद्ध है|

गतवर्ष तक मायाजाल, वाद-विवाद, मंथन, सप्तरंग, तर्क, आमने-सामने, काव्य-युद्ध आदि प्रतियोगिताओ के माध्यम से कैंपस की जनता का व्यक्तित्व विकास होता रहा था। इस वर्ष से इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रतियोगिताओ जैसे 'एक बार की बात है' को प्रारंभ किया जाना है। साथ ही साथ कैंपस रेडियो पर एक नया कार्यक्रम 'किरदार' भी लांच किया जा रहा है, जिसमें हर हफ्ते कोई किरदार अपनी कहानी सुनाएगा। कुछ अन्य योजनाओं जैसे सभा का मुखपत्र 'निर्वाक' और ब्लाग, जिसका नाम अभी निर्धारित नहीं किया जा सका है, पर भी सभा की कार्यकारिणी कार्यरत है।

अंतमें ,

हिंदी साहित्यसभा अपने तेजस और कर्मशील सचिवों को सभा के प्रति उनकी निष्ठा के लिए उन्हें धन्यवाद देती है और साथ ही साथ "अंतस्" के कुशल सम्पादन के लिए राजभाषा प्रकोष्ठ को शुभकामनाएं देती है।

IITians लगाते हैं हिन्दी की क्लास

आईआईटी में जर्मनी और फ्रांस के कई स्टूडेंट्स सीख रहे हिन्दी

सिखाने के लिए बुक भी

नेशनल वर्कशाप 22 को

IIT में बह रही हिन्दी की बयार

शिक्षा, परीक्षा और शौचालय....

शीर्षक देखकर जिन लोगों को अटपटा लग सकता है उनसे मेरा निवेदन है कि वे यह समझें कि हम जिस परा-आधुनिक युग में यात्रा कर रहे हैं उसमें हर बात का हर बात से संबंध है। कल्पना कीजिये कि आप का बेटा एक तकनीकी संस्थान में पढ़ रहा है और आपने उसे सत्य बोलने की शिक्षा दी है। एक दिन आप फोन करते हैं-निकुंज, कहाँ हो? वह कहता है-पापा बाद में बात करते हैं, मैं परीक्षा में हूँ। लेकिन आपको फ्लश की आवाज आती है या आप बच्चों की आवाज को सुनते हैं। आप पूछते हैं–लेकिन बेटा यहाँ तो फ्लश की सी आवाज आ रही है। आपका सत्यकाम बेटा कहता है- "पापा परीक्षा चल रही है, हम लोग टॉयलेट में आये हुए हैं, प्रश्न सं. तीन पर चर्चा कर रहे हैं, बाद में बात करेंगे।" आप चकित हो जाते हैं। हो सकता है आपके हाथों का छाला, आपके आँख की पुतली शिक्षा की कक्षा में अनुपस्थित रहने के अभाव को शौचालय के संवाद या परामर्श से पूरा कर रहा हो।

अप्रैल-मई के दिनों में एन्टरटेनमेंट मेल (अर्थात् ई-मेल) में एक संवाद चला था। शिक्षक गण नकल के बढ़ते हुए प्रयोग और परीक्षा में विद्यार्थियों के बार-बार शौचालय जाने को लेकर काफी दुखी थे। कुछ लोग तो ऐसा भी सोचते थे कि परीक्षा के बीच टॉयलेट जाने पर रोक लगाई जानी चाहिए। एक सुझाव था कि तीन घंटे की परीक्षा को डेढ़-डेढ़ घंटों की दो परीक्षाओं में बाँट दिया जाए। एक लेखक जो थोड़ा गाँधीवादी विचारों के मालूम पड़ते थे, लिखते थे कि यदि वे स्वयं के वेग को तीन घंटे रोक सकते हैं तो विद्यार्थी क्यों नही? उन्होंने परीक्षा में शौचालय जाने पर रोक लगा दी थी। एक ने तो एक विद्यार्थी के बार-बार टॉयलेट जाने पर उसे फेल तक कर दिया था। बात तो सही है। मैं भी अपने को एक अल्पमात्रा का गाँधीवादी मानता हूँ। लेकिन मधुमेह के कारण मुझे शौचालय जाना पड़ता है। ऐसे ही जब एक बार मैं शौचालय गया तो देखता हूँ कि सिस्टर्न के ऊपर 'हैरालम्बस' की किताब रखी थी जो मेरी कक्षा की कोर्स की किताब थी। मैंने उठा ली और बच्चों की नैतिकता उभारने के लिए हॉल में आकर कहा कि यह पुस्तक टॉयलेट में मिली है, जिसकी हो मुझसे ले ले।

जेईई (संयुक्त प्रवेश परीक्षा) में बहुत प्रतिभाशाली बच्चे आते हैं। क्योंकि उक्त परीक्षा के तुरन्त बाद कोई मुझसे आकर नहीं मिला। ग्रेड दिये जाने के बाद एक दिन शौमिक मेरे पास आया और कहने लगा कि क्या यह पुस्तक उसे लौटा सकता हूँ क्योंकि आईएएस (IAS) की तैयारी में यह उसके काम आयेगी। मैंने वह पुस्तक उसे लौटा दी।

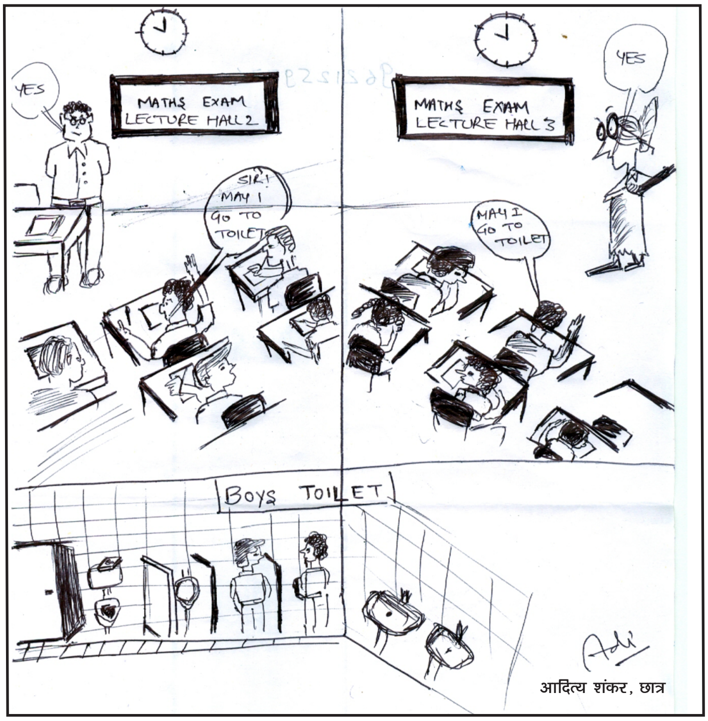

आदित्य शंकर, छात्र

अगर मैं यह पुस्तक उसे न देकर शौचालय में ही फेंक आता या उसमें आग लगा देता तो क्या समाज के लिए वह अधिक उपयोगी सिद्ध होती।

मैं सोचता हूँ क्या हम किसी गलत दिशा में जा रहे हैं? लेकिन फिर मुझे लगता है कि दिशा वही है, बस व्यवहार बदल रहा है। हम करुणा, मैत्री, प्रेम के युग से निकलकर आरटीआई (RTI) के युग में या (Good Governance) के युग में आ गये हैं। परीक्षायें पहले भी होती थीं, नकल और परामर्श पहले भी थे। बदला है तो केवल इतना कि पहले नियमों का उल्लंघन भी प्रेम के कारण होता था और उसकी चर्चा सब लोगों को हल्की-फुल्की प्रसन्नता देती थी। मुझे याद है कि हाईस्कूल के बोर्ड की परीक्षा (जो एक दूसरे स्कूल में) हुई थी, सौभाग्य से मेरे कमरे में मेरे अध्यापक श्री मंजूर हसन की ड्यूटी लगी थी। वे बार-बार आकर मेरी कापी पलटते और एक विशेष पृष्ठ पर उंगली रखकर चले जाते। जब मैं नहीं समझ पाया कि वे क्या करना चाहते हैं, तो उन्हें स्पष्ट करना पड़ा कि मैंने प्र. सं. 4 में गलती की है। मैंने उसे ठीक किया और गणित में विशेष योग्यता प्राप्त की। बात यह है कि मैंने या मंजूर हसन साहब ने जहाँ भी इस बात की चर्चा की तो सबने इसे दो प्रकार से लिया। एक कि मैं अच्छा विद्यार्थी था और दूसरे कि मंजूर हसन साहब कितने उदार, विशाल हृदयी थे और होनहार विद्यार्थियों का भला चाहने वाले थे।

संदर्भ बदल गये हैं। परीक्षा के दिनों के लिए शौचालय तुड़वाये भी नहीं जा सकते, बच्चों को शौचालय जाने से रोका भी नहीं जा सकता, और इन्टरटेनमेंट मेल पढ़-पढ़कर कुंठित या निराश होने से भी नहीं बचा जा सकता।

वैसे मेरा यह भी मानना है कि एक सीमा के अंदर सर्वाधिक प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को नियम तोड़ने की शिक्षा और शौचालयों के सदुपयोग की भी दीक्षा मिलनी चाहिये। अगर आप को मेरी बात गलत लगे तो बताइये कि शिक्षा की समाप्ति पर जब बच्चे समाज में जायें तो कौन सा क्षेत्र चुने। प्रशासन, वित्त, धर्म, राजनीति या सामाजिक जिसमें मात्र कड़ी मेहनत या पूर्ण ईमानदारी के आधार पर ऊँचा उठा जा सकता है या प्रभावी जीवन जिया जा सकता है। मैं तो बिलकुल नहीं चाहूँगा कि मेरे शिक्षार्थी अपने रात-दिन शिक्षा में लगा दें और अपनी पूर्ण ईमानदारी के कारण अन्त में 'नरेगा'(National Rural Employment Guarantee Act) के लिये जॉब कार्ड बनवायें। मैं चाहता हूँ कि मेरी शिक्षा में वे सभी बातें सम्मिलित हों जो उन्हें आज के समाज में सफल बना सकें। मैं नहीं चाहूँगा कि स्व.सत्येन्द्र दूबे की तरह वे कम उम्र में मार दिये जायें और तथाकथित सफल और भ्रष्ट लोग उनके परिवार को सम्मान का पदक दें।

मैं अपने शिक्षार्थियों को अपराध की शिक्षा नहीं देना चाहता पर मैं विद्यार्थियों और शिक्षकों, सभी से यह निवेदन करना चाहता हूँ कि सामाजिक बुराइयों के कारणों की मौलिक पहचान करें। ऐसा तो नहीं ही है कि जो शिक्षा ए ग्रेड लेने के बाद भी हमें आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्वतंत्रता नहीं देती उसमें शुद्धता के नियमों के अतिपालन से किसी को कोई लाभ है। मेरी अपनी मान्यता है कि आज एक ऐसे आन्दोलन की आवश्यकता है जो मंदिर, शिक्षण संस्थाओं, विधि और न्याय के भवनों को ढहाकर उन कल-कारखानों का निर्माण करे जहाँ कोई भी स्वस्थ व्यक्ति अपने मन का और समाज की भलाई का काम कर सके। मैं किस मुँह से अपने शिक्षार्थी या शोध छात्र को ज्ञान का बृहस्पति और नैतिकता का पितामह बनने के लिये विवश करूँ जबकि हमारे देश में उसे इस सब से कुछ नहीं मिलने वाला। मैं यह भी जानता हूँ कि मैंने यदि कभी भी कोई भी समझौता न किया होता तो मैं यहाँ प्रोफेसर नहीं अपने शहर की चीनी मिल में मजदूर होता, टाइप-4 में नहीं, कहीं गंदी बस्ती में रह रहा होता, ई-मेल की जगह घटिया लोकल समाचार पत्र पढ़ता, दो की जगह सात बच्चे होते और 'अंतस्' का प्रधान संपादक न होकर गुप्त साहित्य से जुड़ा होता। मैं अपनी बात कह रहा हूँ, सबकी नहीं। हो सकता है कि कुछ नैतिकता का पूर्ण पालन करते हुए भी इस कलुषित समाज में उन्नति कर रहे हों। अपवाद भी एक सत्य है।

आज हर व्यक्ति अलगाव से ग्रस्त है। हमारे विद्यार्थी भी इसके अपवाद नहीं हैं। तभी तो गीता के योगी की भाँति रात भर जागते हैं और दिन भर सोते हैं? इस अलगाव को दूर कर उन्हें उनके मन की पढ़ाई दें। आज की पढ़ाई तो लाटरी से चल रही है जो स्वयं में भी एक लाटरी है। लग गई तो लग गई, नहीं तो बेकार। अगर बच्चों को उनके मन की शिक्षा प्राप्त हो और उनमें शिक्षा की भूख हो तो परीक्षा की आवश्यकता ही न पड़े और काम में इतना मन लगे कि शौचालय जाना तक भूल जायें। यदि विद्यार्थियों को वही करने को दिया जाये जो वे स्वयं चाहते हों तो परीक्षा की आवश्यकता ही क्या है?

प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

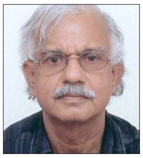

उम्मीद

सर पटक-पटक चट्टानों में, जीवन न अपना खोने दो,
उम्मीद की एक चिंगारी को, झिलमिल नयनों में बसने दो।
क्यों भटक गए हो राहों पर, क्यों बहक गए अभिमानों पर,
जगमग मन की ज्योत बुझा क्यों शेष हुए अंधियारों पर,
राहों पर अडिग रहो तुम अपनी, सपनों के पग को बढ़ने दो,
आशाओं की सेज सजा, मन को झरने सा बहने दो।
उम्मीद की एक चिंगारी को झिलमिल नयनों में बसने दो।।
पथ पर काँटों से डरो न तुम, अथक वीर से बढ़े चलो,
मृगतृष्णा को भेंट चढ़ा तुम, आशाओं से परे चलो,
राहों पर जो भटक गए, उनको सुमार्ग पर बढ़ने दो,
असमंजस का गला घोंट, दृग में सपनों को पलने दो!
उम्मीद की एक चिंगारी को झिलमिल नयनों में बसने दो! !
जब कर्मों की पगडंडी पर हो जाएँ सारे कार्य विफल,
जब स्नेह, प्रेम और आतुरता, तेरी राहों के बनें खलल,
फँसो न इन जंजालों में, कदमों को पथ पर बढ़ने दो,
संदेहों से करो किनारा, जीवन सुख से भरने दो!
उम्मीद की एक चिंगारी को, झिलमिल नयनों में बसने दो!

अनुराग कैथल, छात्र

अलंकार

'अलंकार' भारतीय साहित्य शास्त्र-परंपरा का शब्द है। अलंकार का सामान्य अर्थ है 'आभूषण'। जिस प्रकार अलंकार धारण करने से नारी के सौंदर्य में वृद्धि होती है उसी प्रकार कविता में भी अलंकार के प्रयोग से कविता के सौंदर्य में वृद्धि होती है। इस तरह अलंकार काव्य के बाह्य शोभाकारक धर्म हैं।

सामान्य जीवन में वाणी का व्यापार अपनी सहज गति से चल सकता है, परंतु काव्य के क्षेत्र में उसका अपेक्षाकृत विशिष्ट रूप ही अधिक मान्य है। अपने कथन को चमत्कारपूर्ण बनाने का मोह कवि और रसिक-समुदाय में सदा से रहा है। इसके द्वारा अभिव्यक्ति में स्पष्टता, भावों में प्रभविष्णुता और प्रेषणीयता तथा भाषा में सौंदर्य का सम्पादन होता है। काव्य में रमणीयता और चमत्कार का उद्रेक करने के लिए अलंकारों की स्थिति आवश्यक है। कुछ आचार्यों ने अलंकारों को काव्य के लिए अनिवार्य माना है। '**चंद्रालोक**' के रचयिता महाकवि जयदेव अलंकार-विहीन काव्य को उष्णता-विहीन अग्नि के समान मानते हैं। उनके कथनानुसार जिस प्रकार उष्णता अग्नि का स्वाभाविक धर्म है उसी प्रकार अलंकार काव्य का सहज धर्म है। उन्होंने लिखा है:

> **"अंगी करोति यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृती**
> **असौ न मन्यते कस्माद् अनुष्णमनलंकृती।"**

किन्तु यह मान्यता कुछ आचार्यों की ही है जिन्हें अलंकारवादी कहा जा सकता है। दूसरी ओर अपेक्षाकृत समृद्ध परंपरा ऐसे आचार्यों की है जो अलंकार को कविता के लिए अनिवार्य धर्म के रूप में नहीं मानते। हालाँकि वे स्वीकार करते हैं कि अलंकार के स्वाभाविक इस्तेमाल से कविता के सौंदर्य में वृद्धि होती है। बहरहाल भामह, दंडी, वामन, कुंतक से लेकर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तक सभी ने किसी न किसी सीमा तक अलंकारों का महत्त्व स्वीकार किया है।

आचार्य भामह का कथन है कि जिस प्रकार बिना आभूषण के किसी कांता का सुंदर मुख भी शोभायमान नहीं होता उसी प्रकार अलंकार-विहीन कविता भी लोकप्रिय नहीं होती।

> **"कांतमपि निर्भूषं विभाति वनिता मुखम्"**

आचार्य कुंतक अलंकार-विहीन काव्य को काव्य की संज्ञा देना ही नहीं चाहते। अलंकृत शब्दार्थ-रचना को ही वे काव्य मानते हैं। महर्षि वेदव्यास ने इन सभी आचार्यों से पूर्व ही घोषित किया था कि अलंकार-रहित काव्य उसी प्रकार है जैसे विधवा नारी।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि 'अलंकार' शब्द साहित्यशास्त्र की परवर्ती परंपरा में जिस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, उस अर्थ में अलंकारवादी कहे जानेवाले आचार्यों ने भी प्रयुक्त नहीं किया था। जबकि रस, ध्वनि, गुण आदि अन्य विशेषताओं से वे अनभिज्ञ नहीं थे। उन लोगों ने इन सबका अलग से विवेचन न करके अथवा विशिष्ट महत्त्व का तत्व न मानकर इन सबको अलंकार की परिधि में ही सम्मिलित कर लिया था। यहाँ तक कि रस तत्व भी अपने समस्त विस्तार के साथ 'रसवत' अलंकार में ही सिमट कर रह गया था। आचार्य वामन ने काव्य के सभी सौंदर्य-विधायक तत्वों को अलंकार ही माना है, '**सौंदर्यल्ंकारः**'।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काव्य के क्षेत्र में '**सौंदर्य**' और '**वैचित्र्य**' को दो भिन्न तत्व माना है। उनके विचार से यद्यपि काव्य के लिए दोनों तत्वों का होना आवश्यक है परंतु सौंदर्य से '**वैचित्र्य**'अधिक व्यापक है। इसके अंतर्गत अलंकारों के साथ-साथ भाव, रूप, गुण आदि का भी उत्कर्षपूर्ण अस्तित्व रहता है। यदि अलंकारों को ही काव्य का सर्वस्व मान लिया जाये और काव्य के अन्य गुणों की उपेक्षा कर दी जाये तो ऐसा काव्य उसी प्रकार का होगा जैसे कोई निर्जीव शरीर को आभूषणों से मंडित करे। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए आचार्य मम्मट ने काव्य की परिभाषा देते हुए अलंकार की अनिवार्यता को स्वीकार नही किया है '**तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनल्ंकृती पुनः क्वापि**'। उनके '**अनल्ंकृती पुनः क्वापि**' में अलंकार-विहीनता को भी काव्य में स्वीकृति मिली है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अलंकार की अधिक उपयुक्त परिभाषा हम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में देकर इस विषय को अधिक स्पष्ट कर सकते हैं। आचार्य शुक्ल लिखते हैं **"भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के गुण और क्रिया का अधिकाधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी–कभी सहायक होने वाली युक्ति अलंकार है।"**

काव्यशास्त्र के इतिहास में अलंकारों का महत्त्व सबसे पहले स्वीकृत हुआ है। महर्षि यास्क और पाणिनि जैसे आचार्यों ने भी 'उपमा' के विविध अंगों का उल्लेख किया है। अलंकार-विवेचक आरंभिक ग्रन्थों का पता नहीं चलता परंतु विद्वानों ने महर्षि पाणिनि और आचार्य भामह के काल-सीमा के भीतर अलंकार विवेचक अनेक अन्य आचार्यों का अस्तित्व स्वीकार किया है। पाणिनी ने जहां उपमा आदि अलंकारों के साथ रस आदि का भी उल्लेख किया है, वहाँ भामह ने अपने '**काव्यालंकार**' नामक ग्रंथ में केवल अलंकार को ही काव्य की आत्मा सिद्ध करते हुए उसका विस्तृत विवेचन किया है। भामह के उपरांत दंडी, उद्‌भट, और रुद्रट ने अलंकार-विवेचन

को और भी अधिक पुष्ट एवं विस्तृत किया। इन आचार्यों ने अलंकार के साथ रस और भावों पर भी विचार किया।

यद्यपि अधिकांश परवर्ती आचार्यों ने अलंकार के साथ रस, रीति, वृत्ति और ध्वनि का भी विवेचन किया है, परंतु कुछ आचार्य ऐसे भी हुये हैं जिन्होंने अन्य विषयों को गौण मानते हुये केवल अलंकारों को ही प्रमुखता प्रदान की। इनमें जयदेव, अप्पय दीक्षित, केशव मिश्र, चिंतामणि, करनेस, महाराज जसवंत सिंह आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ध्वनि, रीति और रस संप्रदायवादी आचार्यों ने भी अलंकारों का विस्तृत विवेचन किया है। यह बात और है कि अलंकारवादी आचार्यों की भांति उन लोगों ने केवल उसे ही काव्य की आत्मा नहीं सिद्ध किया।

प्रारम्भ में भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में केवल उपमा, रूपक, दीपक और यमक इन चार अलंकारों का ही वर्णन किया था। भामह के ग्रंथ ‘**काव्यालंकार**’ में 48 अलंकारों का उल्लेख है। रुद्रट ने अपने ‘**अलंकार सारसंग्रह**’ में अलंकारों के भेद-प्रभेदों का वर्णन करते हुये इनकी संख्या 78 तक पहुंचा दी है। जयदेव के ‘**चंद्रलोक**’ में 100 अलंकारों का और उनके उपरांत अप्पय दीक्षित के ‘**कुवलयानंद**’ में 123 और पंडितराज जगन्नाथ के ‘**रसगंगाधर**’ में 191 अलंकारों का विवेचन हुआ है। रीतिकालीन हिन्दी ग्रन्थों में आचार्य केशव की ‘**कविप्रिया**’ सर्वप्रथम है जिसमें 37 अलंकारों का भेदोपभेद सहित वर्णन है। चिंतामणि त्रिपाठी के ‘**कविकुलकल्पतरु**’ में संख्या बढ़ गई है। ‘**भाषा–भूषण**’ में 108 अलंकारों का विवेचन है। आधुनिक काल के अलंकार ग्रन्थों में लाला भगवानदीन की ‘**अलंकार मंजूषा**’ विशेष उल्लेखनीय है। इसमें अलंकारों की संख्या 120 तक पहुँच गई है जो आधुनिक हिन्दी के अलंकार ग्रन्थों की सबसे बड़ी संख्या है।

स-आभार’
डॉ. अमरनाथ
आधार ग्रंथ: हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली
दूसरा परिवर्धित और संशोधित संस्करण: 2012
प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.1-बी,
नेताजी सुभाष मार्ग,
नई दिल्ली-110002

विनम्रता

अनेक विद्यालयों के सूचनापट पर ये शास्त्र वचन लिखे होते हैं,

विद्या ददाति विनयम् विद्या विनयेन शोभते।

अर्थात् विद्या विनय प्रदान करती है, विद्या विनय से ही शोभित होती है। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति जीवनरूपी पाठशाला का एक विद्यार्थी ही है और वह सतत् इस पाठशाला में कुछ न कुछ सीखता रहता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को इस शास्त्र वचन का आदर करना चाहिए और उसे वास्तविक विद्या प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए जो उसको वास्तविक अर्थ में विनय प्रदान करे और जीवन में उसके अर्जित ज्ञान को सुशोभित करे।

अहंकारी व्यक्ति कितना भी विद्यावान हो, वह शोभा नहीं पाता। शास्त्र कहते हैं-

सुशीलो भव धर्मात्मा मैत्रः प्राणिहिते रतः।
निम्नं यथापः प्रवणाः पात्रमायान्ति सम्पदः।। (विष्णु पुराण)

अर्थात् हे मनुष्य! तू सुशील, पुण्यात्मा, प्रेमी और समस्त प्राणियों का हितैषी बन क्योंकि जैसे नीची भूमि की ओर लुढ़कता हुआ जल अपने-आप ही पात्र में आ जाता है, वैसे ही सत्पात्र, विनम्र मनुष्य के पास समस्त संपत्तियाँ स्वयं आ जाती हैं।

जीवन में कोई विद्या न हो पर पेट पालने की विद्या तो हर व्यक्ति के पास होती ही है। फिर ‘विद्या ददाति विनयम्’ सूक्ति के अनुसार विश्व के सभी पढ़े लिखे लोग विनयी होने चाहिए। परंतु देखा यह जाता है कि विनय जैसा सद्गुण अति विरलों के पास ही होता है। वैसे तो सेल्समैनों में, वेटरों में भी बड़ी विनम्रता दिखती है परंतु वह ऊपर-ऊपर की है, अंतर से उनका हृदय तो बस स्वार्थभाव से भरा रहता है। यद्यपि वह विनम्रता भी अच्छी है परंतु सरल, निष्कपट वास्तविक विनम्रता तो सीधे अध्यात्म विद्या का ही प्रसाद है।

समुद्र में अनेक नदियाँ आकर मिलती हैं परंतु वह शांत रहता है, उसमें बाढ़ नहीं आती। इसलिए गंभीर और नम्र बनें। विद्या, धन, उच्च पदवी मान और सम्मान पाकर दम्भी न बनें। जो वृक्ष फलों से लद जाता है वह झुक जाता है, ऐसे ही जो व्यक्ति सच्ची विद्या को पा लेता है वह विनम्र हो ही जाता है। जो गागर नल के नीचे झुकने को तैयार हो जाती है, वही जल से पूर्ण हो जाती है। अत: विनम्रता से विद्या मिलती है और विद्या से पुन: विनम्रता पोषित होती है। जो विनम्र है, उसका सर्वत्र आदर होता है। जो अभिमानी होता है उसका सर्वत्र तिरस्कार होता है। विनम्र व्यक्ति लोगों से आदर-सत्कार पाता है।

नम्रता मानव-जीवन का भूषण है। नम्रता से मनुष्य के गुण सुवासित और सुशोभित हो उठते हैं। नम्रता विद्वान की विद्वत्ता में, धनवान के धन में, बलवान के बल में और सुरूप के रूप में चार चाँद लगा देती है। सच्चा बड़प्पन नम्रता में ही है। हम किसी को भी छोटा न समझें।

सुनीता सिंह, परियोजना उपप्रबन्धक

राजभाषा हिंदी :

भारत के संविधान को 26 नवम्बर, 1949 को स्वीकार किया गया तथा 26 जनवरी, 1950 से उसे लागू किया गया। 14 सितम्बर, 1949 के दिन भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी को स्वीकार किये जाने का निर्णय संविधान सभा द्वारा किया गया था। अत: प्रतिवर्ष 14 सितम्बर को भारत भर में हिंदी दिवस का आयोजन किया जाता है।

संवैधानिक प्रावधान

अध्याय 1 संघ की भाषाः

अनुच्छेद 120ः संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा - (1) भाग–17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा परंतु, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिंदी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ-भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

अनुच्छेद 210ः विधान-मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा - (1) भाग–17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान-मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा परंतु, यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी भाषा में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

अनुच्छेद 343ः संघ की राजभाषाः

(1) संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी, संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खंड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था :

परन्तु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद् उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात, विधि द्वारा;

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

अनुच्छेद 344ः राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समितिः

(1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारंभ से पांच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात ऐसे प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा, एक आयोग गठित करेगा जो एक अध्यक्ष और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा

(2) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रपति को--

(क) संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग,

(ख) संघ के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बंधनों,

(ग) अनुच्छेद 348 में उल्लिखित सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप,

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा और उनके प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित किए गए किसी अन्य विषय, के बारे में सिफारिश करे।

(3) खंड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने में, आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का और लोक सेवाओं के संबंध में अहिंदी भाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक ध्यान रखेगा।

(4) एक समिति गठित की जाएगी जो तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे और दस राज्य सभा के सदस्य होंगे जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(5) समिति का यह कर्तव्य होगा कि वह खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करे और राष्ट्रपति को उन पर अपनी राय के बारे में प्रतिवेदन दे।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति खंड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात उस संपूर्ण प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश दे सकेगा।

अध्याय 2 प्रादेशिक भाषाएं

अनुच्छेद 345: राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं

अनुच्छेद 346 और अनुच्छेद 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिंदी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगाः

परंतु जब तक राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था।

अनुच्छेद 346: एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा

संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगी : परंतु यदि दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिंदी भाषा होगी तो ऐसे पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

अनुच्छेद 347: किसी राज्य की जनसंख्या के किसी भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध

यदि इस निमित्त मांग किए जाने पर राष्ट्रपति को यह प्रतीत होता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

अध्याय 3 उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

अनुच्छेद 348: उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाल भाषा

(1) इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक--

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के,

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के, प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(2) खंड(1) के उपखंड (क) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिन्दी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगाः

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी राज्य के विधान-मंडल ने, उस विधान-मंडल में पुनःस्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड के पैरा (iv) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

अनुच्छेद 349: भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद 348 के खंड (1) में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुनःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा और राष्ट्रपति किसी ऐसे विधेयक को पुनःस्थापित या किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर और उस अनुच्छेद के खंड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात ही देगा, अन्यथा नहीं।

अध्याय 4 विशेष निदेश

अनुच्छेद 350: व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा

प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

अनुच्छेद 350 क: प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं

प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

अनुच्छेद 350 ख: भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के लिए विशेष अधिकारी

(1) भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करे और उन विषयों के संबंध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और संबंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

अनुच्छेद 351: हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश

संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

वस्तुत: राजभाषा, (हिंदी) से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों के ही तहत सांविधिक उपबंधों के अनुपालन को सुनिश्चित करने तथा समीक्षा करने एवं संघ के शासकीय प्रयोजन हेतु राजभाषा (हिंदी) के प्रगामी प्रयोग, प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से भारत सरकार के गृहमंत्रालय के एक स्वतंत्र विभाग के रूप में सन् 1975 में राजभाषा विभाग की स्थापना की गई। जिसका विजन है राजभाषा संबंधी सांविधानिक और सांविधिक उपबंधों के अनुसार संघ के शासकीय प्रयोजन के लिए हिंदी के प्रगामी प्रयोग हेतु कार्यक्षम परिवेश तैयार करना जिससे हिंदी देश की सामासिक संस्कृति के समस्त तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।

राजभाषा प्रकोष्ठ

कर्तव्य पालन

राजा विक्रम बेताल से बोले-तुम्हारे हँसने का कारण क्या है? मैंने ऐसा क्या किया है जो तुम हंस रहे हो?

इस पर बेताल बोला- हे राजा विक्रम! मैं तुम्हारी बात पर नहीं, वरन दुनिया के लोगों पर हंसा हूँ। इसका अपना एक कारण है। सुनो, मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। कहानी सुनकर तुम न्याय की बात करना।

राजा विक्रम हमेशा की भाँति खामोश रहे और बेताल उन्हें कहानी सुनाने लगा।

बेताल बोला- मलयदेश का राजा समरजीत बड़ा वीर और विद्वान था। उसके राज्य में चन्द्रमणि नामक एक महासेठ रहता था। एक दिन एक दरबारी ने आकर राजा से कहा-महाराज! हुक्म हो तो एक बात निवेदन करूँ।

कहो! राजा बोला।

अन्नदाता! हमारे राज्य के महासेठ चन्द्रमणि की पुत्री मणिमाला अत्यंत रूपवती है। उसके समान सुंदरी शायद और कोई नहीं है। वह विवाह योग्य हो गई है। मेरा ख्याल है, आप उससे विवाह करके रनिवास की शोभा बढ़ाएं।

सुनकर राजा समरजीत ने अपनी सम्मति दी- अगर वह वास्तव में अनुपम सुन्दरी है, तो जरूर रानी बना लेंगे।

दरबारी के जाने के बाद राजा समरजीत ने अपनी विश्वस्त सेविका को बुलाया और कहा- सुनो! तुम हमारी सबसे विश्वस्त सेविका हो। हमें एक सत्य का पता लगाकर खबर दो ।

आज्ञा करें महाराज! देवकी बोली ।

“हमारे महासेठ चन्द्रमणि की कन्या मणिमाला अत्यंत रूपवती है। वह हमारे अंत:पुर के योग्य है या नहीं? इसका पता करके सूचना देना।”

सुना तो मैंने भी है, महाराज पर देखा नहीं है, ।

अब देखकर पता करो।

दासी राजा की आज्ञा शिरोधार्य कर चल पड़ी। वह महासेठ चन्द्रमणि के निवास पर आई। उसने मणिमाला को देखा। जब दासी ने मणिमाला को देखा तो वह उसे देखती ही रह गई। जैसा उसने सुना था, उससे कहीं अधिक रूपवती थी वह। उसका रूप देखकर वह हैरान रह गई। राजा समरजीत के अंत:पुर की प्रत्येक रानी उसके आगे फीकी थी। मणिमाला को देखकर वह लौट आई।

उसने मणिमाला का रूप-रंग देखकर निर्णय किया कि यदि वह अपने कर्तव्य का पालन करती है और सत्य बात राजा से कह देती है तो राजा मणिमाला को अंत:पुर में ले आएगा। फिर वह भोग-विलास और राग-रंग में डूब जाएगा। इस तरह तो सारा राजकाज ही चौपट हो जाएगा। परमसुंदरी मणिमाला के पास से वह एक पल के लिए भी न हटेगा।

उसने वापस आकर समरजीत से मुलाकात की।

देख आईं?

हाँ महाराज! उसने कहा।

कैसी है?

अपराध क्षमा हो महाराज! उसने कहा। आपके अंत:पुर की सभी रानियाँ उससे अच्छी हैं।

तब रहन दो।

राजा ने अपना विचार बदल दिया। इस बीच सेठ चंद्रमणि को इस बात का पता लगा कि राजा ने उसकी कन्या को देखने के लिए अपनी विशेष सेविका को भेजा था। वह राजा के पास गया और उनको सहर्ष अपनी कन्या देने के लिए प्रस्तुत हो गया, पर राजा ने इंकार कर दिया। महासेठ चंद्रमणि निराश व दुखी होकर लौट आया।

तब उसने अपनी कन्या का विवाह राजा के दरबारी कृष्णानंद से कर दिया। कृष्णानंद उसको पत्नी बनाकर सुखपूर्वक रहने लगा।

हे राजा विक्रम! कुछ समय बाद राजा समरजीत नगर भ्रमण को निकला। जब वह कृष्णानंद के महल के सामने से निकला तो दूसरी मंजिल की खिड़की पर एक अत्यंत रूपवती स्त्री को देखकर वहीं खड़ा रह गया। उसे विश्वास नही हो रहा था कि वह कोई अप्सरा है या देवकन्या। घोड़े पर सवार राजा उसे देखता रह गया। उसका रूप देखकर वह बेचैन हो गया।

वह राजमहन वापस आया। उसे चैन नहीं पड़ रहा था। उसने अपने सिपाहियों से पूछा-वह स्त्री कौन थी?

सिपाहियों ने पता करके बतलाया कि वह कृष्णानंद की पत्नी है। राजा समरजीत अपना कलेजा थामकर रह गया। जब कृष्णानंद को इसका पता चला कि राजा ने उसकी पत्नी के बारे में पूछताछ की है, तो वह सीधे राजा समरजीत के पास आया।

राजा समरजीत ने पूछा-क्या वह तुम्हारी पत्नी है?

हाँ, अन्नदाता!

समरजीत होंठ काटने लगा। कृष्णानंद बोला-”महाराज! वह महासेठ चंद्रमणि की बेटी है।“

राजा चौंक गया-क्या कहा।

”हाँ महाराज! जब आपने उससे विवाह करने से इन्कार कर दिया तो मैंने कर लिया।“

राजा हैरान रह गया। उसने तत्काल उसी सेविका को बुलाया।

”तुमने झूठ क्यों बोला?“

सेविका नम्रतापूर्वक बोली-”अन्नदाता! अगर मैं सत्य कहती तो आप उससे विवाह कर लेते और राग-रंग में डूब जाते। फिर सारा राजकाज धरा रह जाता। अपने इस कर्तव्य के आगे मैंने स्वामिभक्ति का परिचय नहीं दिया?“

राजा आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त सेविका को मौत के घाट उतारने का आदेश दिया। कृष्णानंद सब सुन रहा था।

वह बोला-”अन्नदाता! इसे आप सजा न दें। मैं मणिमाला आपको देने के लिए तैयार हूँ।“

”मैं परायी स्त्री को हाथ नहीं लगाता।“ राजा ने कहा।

सेविका के गिड़गिड़ाने पर राजा समरजीत ने उसे देश निकाला दे दिया।

अब बोलो राजा विक्रम! क्या इसमें सचमुच सेविका का दोष था?क्या उसने पाप नहीं किया?“

राजा विक्रम बोले- ”देशभक्ति स्वामिभक्ति से बड़ा कर्तव्य है। सेविका ने स्वामिभक्ति का परिचय न देकर अपराध जरूर किया था लेकिन, यह अपराध उसने कर्तव्य पालन को देखते हुए किया था। इस कारण राजा समरजीत ने देवकी को देश निकाला देकर अपराध किया है।“

विक्रम की बात सुनकर बेताल अट्टहास कर उठा। वह बोला-तुम्हारा कहना ठीक है विक्रम! मगर मैं चला।“

फिर वह कंधे से कूद कर भाग छूटा और सीधे उसी पेड़ पर जाकर लटक गया।

साभार
विक्रम बेताल

नाभिकीय ऊर्जा संरक्षा में नियामकता का महत्व

1. नाभिकीय ऊर्जा अपरिहार्यः

नाभिकीय ऊर्जा आज के संदर्भ में अपरिहार्य हो गई है। भारत पारंपरिक ऊर्जा के स्रोत सीमित हैं। देश में कोयला करीब 180 बिलियन टन है। तेल व प्राकृतिक गैस 12 बिलियन टन कोयले के बराबर है। हायड्रो से करीब 0-18 बिलियन टन कोयले के बराबर बिजली उत्पादित की जा सकती है। यूरेनियम जो कि भारत में 110,000 टन के करीब है, उससे 330 बिलियन टन कोयले के बराबर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। थोरियम, भारत में 320,000 टन के करीब और इससे करीब 1000 बिलियन टन कोयले के बराबर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत जैसे कि सूर्य, वायु, भूगर्भ, biomass, आदि का अपना महत्व है। लेकिन इनका योगदान सदैव पूरक ऊर्जा के रूप में ही रहेगा। अतः इन तथ्यों से सुनिश्चित हो जाता है कि भारत में ऊर्जा के सामान्य स्रोत बहुत सीमित है। दूरगामी ऊर्जा-प्राप्ति का हल, नाभिकीय ऊर्जा-स्रोतों से ही पूरा हो सकता है। इसलिये जैसा पहले कहा गया है, नाभिकीय ऊर्जा अपरिहार्य है।

2. नाभिकीय ऊर्जा में संरक्षाः

नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन में रेडियोधर्मी पदार्थ पैदा होते हैं जिनमें से अल्फा, बीटा तथा गामा किरणें निकलती हैं। ये किरणें एक निश्चित मात्रा से ज्यादा होने पर, कार्मिकों, आम जनता तथा पर्यावरण को हानि पहुँचा सकती हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि नाभिकीय ऊर्जा में संरक्षा के वे सभी उपाय किये जाएं जिससे कि रेडियोधर्मी पदार्थ रिएक्टर की सामान्य अवस्था या दुर्घटना की अवस्था में, कार्मिकों, आम जनता तथा पर्यावरण को कोई हानि न पहुँचा सकें। अतः नाभिकीय रिएक्टरों में रेडियोधर्मी पदार्थों व पर्यावरण के बीच कई अवरोध लगाये जाते हैं। जैसे कि ईधन के चारों ओर आवरण, बंद प्राथमिक ऊष्मा संवहन तंत्र व रिएक्टर भवन। इसके अलावा अभिकल्पन, निर्माण, कमीशन तथा प्रचालन में गहन प्रतिरक्षा (defence in depth) के सिद्धांतों को अपनाया जाता है। पहले स्तर की संरक्षा में वे सभी उपाय किये जाते है जिससे कि रिएक्टर में कोई कमी उत्पन्न हो भी जाये तो उसका पता लग सके और रिएक्टर को बिना कोई हानि पहुँचाएँ उस पर उचित कार्यवाही की जा सके। तीसरे स्तर पर यह प्रयास किया जाता है कि यदि इन सब के बावजूद भी रेडियोधर्मी पदार्थ ईंधन व बंद प्राथमिक ऊष्मा सतेहन तंत्र से बाहर आ जाते हैं तो उसे रिएक्टर भवन के बाहर आम जनता तथा पर्यावरण तक एक निश्चित सीमा से अधिक मात्रा में न पहुँचने दिया जाए।

3. नाभिकीय ऊर्जा में नियामकता

समाज की उन सभी गतिविधियों में जो समाज के लिए त्रासदायक हो सकती हैं, तथा जो उचित रूप से उपयोग न करने पर हानिकारक भी हो सकती हैं, उनके लिए नियामकता की आवश्यकता होती हैं। नाभिकीय ऊर्जा के उपयोग में भी ऐसा ही है। अतः भारत सरकार ने नाभिकीय ऊर्जा व विकिरण संरक्षा की नियामकता के लिए 1983 में परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (पऊनिप) की स्थापना की। यह स्थापना परमाणु ऊर्जा अधिनियम, 1962 की धारा 27 में निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए की गई है और इसके संरक्षा व नियामकता कार्य व अधिकार क्षेत्र, अधिनियम की धारा 16, 17 व 23 में दर्शाये गये आधार पर की गयी है।

1. अधिकार क्षेत्र

वर्तमान में परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के अधिकार क्षेत्र में 20 प्रचालित परमाणु बिजलीघर 2 अनुसंधान रिएक्टर तथा 7 नाभिकीय विद्युत परियोजनाओं की संरक्षा निगरानी का उत्तरदायित्व आता है। इसके अतिरिक्त पऊनिप के उत्तरदायित्वों में, रिएक्टर से संबंधित ईंधन चक्र सुविधाएं तथा संबंधित संस्थानों जैसे कि यूरेनियम कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लि., इंडियन रेअर अर्थ लि., नाभिकीय ईधन संमिश्र परमाणु खनिज अन्वेषण प्रयोगशालाएं, इलेक्ट्रानिक कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लि., भारी पानी संयंत्र, राजा रमन्ना प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र आदि में संरक्षा प्रावधानों का प्रवर्तन करना भी सम्मिलित है। परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के अधिकार क्षेत्र में विकिरण संरक्षा से संबंधित गामा किरणक, कण त्वरक, विकिरण उपचार केन्द्र, नाभिकीय औषध प्रयोगशालाएं, विकिरण प्रतिरक्षा अमापन, औद्योगिकी रेडियो चित्रण संस्थान, न्यूक्लीय प्रक्रिया नियंत्रण संस्थापनाएं, शैक्षणिक एवं अनुसंधान संस्थान, नैदानिक एक्स-रे संस्थापनाएँ आदि भी शामिल हैं।

2. कार्यक्षेत्र

परमाणु ऊर्जा संरक्षा नियामकता, अभिकल्पना से लेकर संयंत्र स्थल चयन, निर्माण, कमीशन तथा प्रचालन तक लागू की जाती है। कुछ स्तरों पर, जिन पर मुख्य रूप से नियामकता अपेक्षित होती है, का वर्णन नीचे दिया गया है।

(क) संयंत्र स्थल चयन

परमाणु ऊर्जा संयंत्र उन्हीं जगहों पर स्थापित किये जाते हैं जहाँ पर प्राकृतिक घटना जैसे कि भूकंप, बाढ़, तूफान आदि आने की संभावना कम हो। स्थल के आसपास भारी उद्योग न हों तथा हवाई-अड्डे भी स्थापित नहीं होने चाहिए। संयंत्र स्थल से संबंधित सभी पहलुओं पर न्यूक्लियर पॉवर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया (NPCIL), जो कि परमाणु ऊर्जा के प्रयोग से संबंधित सभी क्रियाओं के लिए जिम्मेदार है, एक प्रतिवेदन तैयार करती हैं। प्रतिवेदन की समीक्षा व मूल्यांकन का कार्य पऊनिप द्वारा स्थापित एक समिति द्वारा किया जाता है। संयंत्र स्थल के सभी अभिलक्षण, पऊनिप के

संहिता (कोड) में दिये गये अभिलक्षणों के मूल्यांकन पर खरे उतरने चाहिए। न्याक्लियर पॉवर एक और प्रतिवेदनः पर्यावरण प्रभाव आंकन, तैयार करती है। इस प्रतिवेदन की समीक्षा पर्यावरण व वन मंत्रालय करता है। सभी पहलुओं की समीक्षा के बाद यह मंत्रालय स्थल-चयन की मंजूरी देता है। मुख्य तौर पर हम यह कह सकते हैं कि संयंत्र हेतु स्थल चयन में यह सुनिश्चित किया जाता है कि संयंत्र पर्यावरण पर दुष्प्रभाव तो नहीं छोड़ता और स्थल संयंत्र के लिए उपयुक्त है।

(ख) निर्माण

न्यूक्लियर पॉवर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लि. संरक्षा विश्लेषण प्रतिवेदन तैयार करती है। इस प्रतिवेदन में संयंत्र की अभिकल्पना का आधार, तरह-तरह की सम्मिश्रित व कल्पित घटनाओं का पूरा ब्यौरा व संरक्षा विश्लेषण होता है। इस प्रतिवेदन की समीक्षा पऊनिप की तीन स्तरीय समितियों द्वारा की जाती है। पहले स्तर पर संयंत्र अभिकल्पना संरक्षा समिति-अभिकल्पना एवं संरक्षा-विश्लेषण से संबंधित प्रतिविदनों की समीक्षा करती है। इस समिति की सिफारिश परामर्श समिति द्वारा मूल्यांकित की जाती है। अंत में इन दोनों समितियों की राय को ध्यान में रख कर परिषद संबंधित विषयों पर अनुज्ञा पत्र (लाइसेंस) देती है।

(ग) कमीशन

यह वह प्रकिया है जिसमें निर्मित संयंत्र के सभी पुर्जों तथा उपकरणों को प्रयोग में लाया जाता है और इस बात की पुष्टि की जाती है कि इनका अनुपालन ऐसा ही है जैसे की निर्माण के समय अभिकल्पित किया गया था।

(घ) प्रचालन

(I) मुख्य उद्देश्य

प्रचालित संयंत्रों के प्रचालन में संरक्षा नीति आदेश के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं (1) संयंत्र प्रचालन के दौरान, संगठन की प्रभावकता हेतु

गुणवत्ता आश्वासन की निरंतर जाँच, (2) प्रचालन एवं अनुरक्षण के दौरान, वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रबंधन एवं प्रक्रिया में उच्च संरक्षा मानकों को प्राप्त करना, (3) गैसीय एवं द्रवीय बहिस्त्रावों का उचित प्रबंधन एवं सतत् मानीटरिंग।

(II) समीक्षा तंत्रः

रिएक्टर प्रचालन से संबंधित संरक्षा व समीक्षा संबंधित सभी मामलों को बहु-समिति स्तर पर जाँचा जाता है और उचित निर्णय लिये जाते हैं।

(III) संरक्षा संबंधित घटनाएं

पुनरीक्षण एवं आवश्यक निर्णयों के लिए संयंत्रों के प्रचालन में पऊनिप को संरक्षा संबंधी घटनाओं के बारे को सूचित करने के लिए एक पद्धति विकसित की गई है। जब कभी कोई घटना घटती है तो संयंत्र-प्रबंधन एक महत्वपूर्ण सरंक्षा-घटना-रिपोर्ट जारी करता है। इस रिपोर्ट की संरक्षा समिति द्वारा समीक्षा की जाती है। इससे ऐसी पद्धति विकसित होती जिससे कि इस प्रकार की घटना आगे न हो।

(IV) प्रचालन का प्राधिकरण

विद्युत संयंत्रों के प्रचालन के लिए प्राधिकरण का नवीनीकरण प्रचालन के पाँच वर्ष बाद किया जाता है तथा यह नवीनीकरण नियामक निकाय द्वारा संरक्षा एवं विकरणीय कार्यनिष्पादन की विस्तृत समीक्षा के बाद किया जाता है। नियामक निकाय द्वारा दस वर्ष में एक बार इससे भी अधिक विस्तृत समीक्षा की जाती है जिसे सावधिक संरक्षा समीक्षा कहा जाता है। इस समीक्षा के अंतर्गत संरक्षा का मूल्यांकन किया जाता है जिसमें संरक्षा-मानकों एवं प्रचालन प्रयोग में सुधार, संयंत्र काल प्रभावन के संचयी परिणाम, संशोधन, प्रचालन, अनुभव एवं प्रौद्योगिकी में विकास सम्मिलित है।

(V) ऑडिट कार्यक्रम व नियामक निरीक्षण

बिजलीघर में प्रचालन सीमाओं और परिस्थितियों से संबंधित पहलुओं के अनुपालन के सत्यापन के लिए ऑडिट कार्यक्रम किया जाता है। नियामक निकाय वर्ष में दो बार नियामक अपेक्षाओं के अनुपालन की पुष्टि के लिए निरीक्षण करता है। नियमित निरीक्षणों के अतिरिक्त विशेष प्रकार के नियामक निरीक्षण भी किये जाते हैं। इनमें मुख्यत: निम्न पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है।

(i) प्राचालन, अनुरक्षण व गुणवत्ता आश्वासन का ऑडिट।

(ii) तकनीकी विनिर्देशों तथा अन्य लाईसेंसिंग दस्तावेज से अनुकरण करना।

(iii) विभिन्न नियामक सिफारिशों का अनुपालन

(iv) समुचित लाइसेंस प्राप्त स्टॉफ की नियुक्ति

(v) स्वास्थ्य, संरक्षा एवं संरक्षा से संबंधित प्रणालियाँ

(vi) विकिरण प्रणाली तथा व्यावहारिक न्यूनतम प्राप्त सीमा

(vii) आपातस्थिति से निपटने की तैयारी

(VI) संरक्षा कार्य निष्पादनः

पऊनिप निरन्तर नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों की संरक्षा अवस्था मॉनीटर करती रहती है। उदाहरणार्थ निम्न संरक्षा कार्य निष्पादन तरीके, संयंत्रों की संरक्षा-स्थिति का मूल्यांकन करने में मदद करते हैं:

(i) संरक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण घटनाएं तथा उनकी अंतर्राष्ट्रीय नाभिकीय घटना पैमाने पर दर।

(ii) कार्मिकों पर वैयक्तिक विकिरण उद्भासन।

(iii) पर्यावरण तथा लोगों में विकिरण की मात्रा।

1. प्रचालित संयंत्रों के मामले व उन पर कार्यः

उदाहरणार्थ कुछ मुख्य मामले व उन पर हुए कार्य नीचे दिये गये हैं.

2. जिरक्लायर दाब नली का काल प्रभाव प्रबंधनः

पुराने रिएक्टरों में, दाब नली जिरक्लायर की बनी होती है। यह देखा गया है कि जिरक्लायर हाइड्रोजन को रिएक्टर के पर्यावरण से लेती है और इससे इनके गुणों में कमी आ जाती है। इसलिए इससे पहले कि ये नली खराब हों, इसकी हाईड्रोजन पकड़ने की गति का निरीक्षण किया जाता है और इनके दूसरे गुणों का भी अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन के परिणाम-स्वरूप दाब नली जिरकोनियम-नियोबियन पदार्थ से बदल दी जाती है। इस नये पदार्थ की ट्यूब में हाइड्रोजन की पकड़ कम होती है। आज की तारीख में देश के सभी पुराने रिएक्टरों में ये दाब नली बदल दी गयी है।

3. पुराने-संयंत्रों में संरक्षा सुधारः

नियतकालिक पुनरीक्षण के आधार पर पुराने रिएक्टरों में निम्न प्रकार के सुधार किये गये हैं।

(I) राजस्थान ऑटोमिक पॉवर प्लांटः

राजस्थान ऑटोमिक पॉवर प्लांट में एक नया उच्च दाबित भारी पानी शीतलक लगाया गया है। यह एक अतिरिक्त संरक्षा संरचना है जो कोर में भारी पानी को उच्च दाब में भेजती है। यह रिएक्टर को शुरू में ठंडा करने के काम आता है हालाँकि लम्बे समय तक रिएक्टर को ठंडा करने के लिए पहले से ही एक दूसरी निम्न दाब मंदक प्रणाली उपलब्ध है।

(II) राजस्थान तथा मद्रास ऑटोमेटिक पॉवर प्लान्टः

राजस्थान तथा मद्रास ऑटोमिक पावर प्लान्ट में एक और नियंत्रण कक्ष बनाया गया है जिससे कि मुख्य नियंत्रण कक्ष में आग आदि लगने पर यह दूसरा नियंत्रण कक्ष सुरक्षित रहे और काम आ सके।

इन दोनों में पावर व नियंत्रण केबल को भी अलग कर दिया गया है जिससे आग आदि लगने पर दोनों तरह की केबल एक साथ खराब न हो।

राजस्थान ऑटोमेटिक पॉवर प्लान्टः

राजस्थान ऑटोमेटिक पॉवर प्लान्ट में एक और डीजल जनरेटर का प्रबंध किया गया है और उसको ऊंचाई पर रखा गया है। जिससे बिजली न रहने पर इसके द्वारा बिजली उपलब्ध रहे।

तारापुर रिएक्टर के लाइसेंस का नवीनीकरण निम्न समीक्षाओं के आधार पर किया गया।

- अभिकल्पन आधार एवं संरक्षा विश्लेषण
- प्रचालनीय निष्पादन
- काल प्रभावन प्रबंध
- भूकंपन का पुर्नमूल्यांकन
- संभावी संरक्षा विश्लेषण

सारांशः

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में भारतीय नाभिकीय ऊर्जा अपरिहार्य है तथा इस कार्यक्रम में नियामकता का विशेष महत्व है। संयंत्र स्थल चयन से लेकर रिएक्टर के निर्माण तथा कमीशन के समय तक नियामकता अनिवार्य है और प्रचालित संयंत्रों में भी निरंतर संयंत्रों के निरीक्षण व अनुरक्षण की आवश्यकता है। परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद, प्रचालन प्रमाणों का मूल्यांकन करके इन आधारों पर संरक्षा मापदंडों को तैयार कर परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में विशेष संरक्षण के उपायों का प्रयोग करती है। पुराने रिएक्टरों में नवीन संरक्षा परमाणक कार्यान्वित किये गये हैं। इनसे संरक्षा सुधार हुए हैं।

प्रोफेसर ओमपाल सिंह
अतिथि संकाय

आस्था के सन्दर्भ में वैज्ञानिक तर्क कितने सुसंगत ?

धर्म-विज्ञान अथवा विज्ञान से जनित-आस्था के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में सदा से इस आशय की एक बहस चलती आयी है कि धार्मिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत अवधारित विभिन्न परिपाटियाँ, कर्मकाण्ड, व्यवस्थायें एवं सन्नियम किस सीमा तक विज्ञान-सम्मत हैं? इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आस्था या विश्वास एक ऐसा सन्दर्भ है जो सामान्य रूप से वैज्ञानिक तार्किकता की कसौटियों पर नहीं परखा जा सकता क्योंकि इसमें अनेकानेक ऐसे प्रसंग सन्निहित हैं जो नैसर्गिक रूप से केवल विश्वास पर अवलम्बित हैं जिन्हें यह मानकर चला जाता है कि वे जैसे हैं, वस्तुत वैसे ही हैं, यथा ब्रह्माण्ड का परिसृजन, चर-अचर में प्राण-स्पन्दन, जीवन-मृत्यु व पुनर्जन्म, कर्म-प्रारब्ध, इन्द्रिय लोक, परालौकिक जगत, साधना-जन्य प्राप्तियाँ और सबसे परे पारमेश्वरी सत्ता। आज सब भली-भाँति रूप से जानते हैं कि खगोल विज्ञान, भौगोलिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, मानव विज्ञान तथा चिकित्सा, अर्थ, प्रकृति एवं नीति आदि विज्ञान की नाना विधाओं के सुस्थापित व वृहद् अंग हैं एवं जिनकी स्वयं की अपनी अनेक उप-शाखायें हैं। लेकिन फिर भी जब विषयगत क्षेत्र के बारे में विचार या समीक्षा की स्थिति आती है तो विज्ञान क्षेत्र के तर्कशास्त्री उसे वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के सुनिश्चित मापदण्डों पर ही आंकना स्वाधिकार मानते है और धर्म, आस्था अथवा विश्वास के प्रति इसी परिप्रेक्ष्य में विवाद की स्थिति बन जाती है।

निःसन्देह, विज्ञान का परिक्षेत्र प्रकृति में पूर्व से विद्यमान तत्वों व तथ्यों की गवेषणा तक ही सीमित है। वह इन तत्वों के मूल, उसमें अन्य तत्वों का कतिपय अनुपातों में सम्मिश्रण, विलयन आदि के विश्लेषण द्वारा अपनी शोधों व अन्वेषणों को एक तार्किक परिणिति तक ले जाता है। विज्ञान की यह स्वाभाविक प्रक्रिया है और ऐसे ही परिप्रेक्ष्य में वह तदनुरूप इन्हीं मापदण्डों व प्रक्रियाओं पर धर्म व आस्था जैसे-क्षेत्रों को भी आंकने की तत्परता दिखाता है। यदि विज्ञान के सम्पूर्ण सन्दर्भ का मोटा आकलन किया जाये, तो सुस्पष्ट होगा कि विज्ञान ने आज तक समाज को प्रकृति में पूर्व से विद्यमान तत्वों से परे कुछ नहीं दिया यद्यपि इसके विपरीत वह इन तत्वों पर शोध करके संसार को निरन्तर नव-अन्वेषण प्रदान करता आ रहा है। किन्तु यही विज्ञान जब आस्था, धार्मिक अवधारणाओं व दिव्य सत्तात्मकता से दो-चार होता है तो अचानक जैसे सब गड्ड-मड्ड हो जाता है, क्योंकि इन आस्थाओं की पृष्ठभूमि में वर्णित कथानक या आध्यात्मिक दृष्टान्त यदि वैज्ञानिक सन्दर्भों से कहीं साम्य भी रखते हैं तो भी विज्ञान की युक्ति-युक्त अपेक्षाओं पर वे बहुधा खरे नहीं उतरते। फलस्वरूप वैज्ञानिक तार्किकता उन्हें मान्यता प्रदान नहीं करती। तो क्या यह कहा जाये कि आध्यात्मिक सत्य या आस्थायें वैज्ञानिक प्रतिमानों के सापेक्ष अस्तित्वहीन है या कि वे निरा मिथ्या या कपोल-कल्पित हैं? आस्था, धर्म व अध्यात्म विषयक ढेरों मान्यतायें, चर्चायें व ऐसे कथानक या दृष्टान्त इस जगत में आम लोगों को सर्वत्र सुनने को मिल जाते हैं जिन्हें विज्ञान सामान्य रूप से अपनी कसौटियों के परिप्रेक्ष्य में आत्मसात या हृदयंगम नहीं कर पाता परन्तु उनके मूल से सम्बद्ध या उनके भुक्तभोगी पात्रों; जो अनेक प्रकरणों में अति विद्धान, विशिष्ट क्षेत्रों के लब्ध-प्रतिष्ठ व धीर-गम्भीर व्यक्ति भी होते हैं, से उनके अनुभवों को सुनने के उपरान्त यह समाज, यहाँ तक कि वैज्ञानिक भी, इन मान्यताओं व दृष्टान्तों पर विश्वास करने के लिये विवश हो जाते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमें कोई संत-साधक सायास अथवा अनायास सुदीर्घ अवधि के लिये समाधिस्थ हो गया, किसी बालक या व्यक्ति को अपने विगत जीवन अथवा किन्हीं व्यक्तियों से अपने गत जन्मों के सम्बन्धों का स्मरण हो आया, उसे किसी अपराध से सम्बन्धित साक्ष्य का संज्ञान हो गया, सिद्ध जनों के मात्र शब्दोच्चार, स्पर्श, आशीवार्द या तथाकथित लौकिक व्यवहार के प्रतिफल में किसी के असाध्य रोग व कष्टों का निवारण हो गया या किसी अप्रत्याशित भौतिक अभीष्ट की प्रतिपूर्ति हो गयी, भावी के विषय में किसी का आकस्मिक उच्चार सहसा प्रत्यक्ष होकर फलीभूत हो गया, इत्यादि-इत्यादि। क्या ऐसे सन्दर्भों की कोई वैज्ञानिक व्याख्या हो सकती है? 19/20वीं सदी में निराहारा योगिनी के नाम से विख्यात महान योगिनी संत का एक ऐसा ही दृष्टांत है जिसमें उनके द्वारा 56 वर्षो तक अनवरत कोई आहार यहाँ तक कि किसी पेय पदार्थ जैसे जल की भी एक बूँद का सेवन नही किया गया जब कि वे सदा सर्वदा पूर्ण स्वस्थ और देदीप्यमान तेजपुंज से युक्त थीं। इससे इतर अनेक महान संतों के उदाहरण हैं जिनमें वे साधना मार्ग के माध्यम से अपनी इस काया रूपी भौतिक आवरण का स्वेच्छा से परित्याग करके समाधिस्थ होने में सक्षम रहे। (योगी कथामृत का प्रकरण 46) भारत के प्रसि़द्ध वैज्ञानिक प्रो० जगदीश चन्द्र बसु द्वारा अपनी शोध से प्रथम बार यह विज्ञान सम्मत रूप से सिद्ध किया गया कि वनस्पतियों में एक जीवन्त स्पन्दन है जो उनमें सतत् विद्यमान रहता है। इस शोध से भारतीय या कहें कि हिन्दू अध्यात्म की यह चिर-अवधारणा मूर्त हुयी जिसके अनुसार चर अथवा अचर, सभी को प्राणिमात्र माना गया हैं। इस तरह यह देखा जा सकता है कि विज्ञान ने समय के अन्तराल के साथ संसार में विद्यमान तत्वों के सत्य की खोज की है लेकिन इन उदाहरणों से बार-बार बस यही पुष्ट होता है कि विज्ञान प्रकृति मात्र में पूर्व की विद्यमानता तक ही

सीमित है। चर प्राणियों के स्थूल अस्तित्व की पहचान उनके भौतिक या बाह्य आवरण से होती है लेकिन यह शरीर किस भाँति संचरित एवं गतिमान है, उसके अस्तित्व का उद्गम या स्रोत क्या है?, उसमें वंशानुगत शारीरिक गुणावगुण तथा विशिष्टताओं के मूल में क्या कारक हैं?, इस शरीर में विद्यमान शारीरिक कर्मेन्द्रियों से इतर ज्ञानेन्द्रियों की क्या सत्ता है?, कथित प्राण तत्व जिसे हिन्दू अध्यात्म या सनातन धर्म में. "आत्मा" के नाम से सम्बोधित किया गया है, शरीर में कैसे आता है और शारीरिक इहलीला समाप्त हो जाने के उपरान्त शरीर से निकल कर वह कहाँ चला जाता है? जीवन में भौतिक सुख-दुःख जिनका अन्यथा कोई कारण दृष्टिगोचर नहीं होता, क्यों और कैसे हैं? इत्यादि के विषम में विज्ञान निरन्तर अन्धकार में है। कोई नही जानता कि इन विषयों को वह कभी जान भी सकेगा, क्योंकि यह सन्दर्भ मूलतः आस्था, धर्म या आध्यात्मिक विश्वास पर आधारित है। आध्यात्मिक जगत भी एक पृथक परन्तु स्वय में जीवन्त यथार्थ है जिसका विज्ञान से सरोकार कदाचित ही हो। इसी कारण विज्ञान अपने निरन्तर यत्नों के बाद भी इस क्षेत्र में विमूढ़ता की स्थिति में बना हुआ हैं।

विज्ञान ने यद्यपि प्राणियों में "जीन्स" जो उसे वंशानुगत आधार देती है, के विषय में खोज करने का दावा किया है, जिसके अनुसार वह भविष्य में मानव के विकास में क्रान्ति की अपेक्षा रखता है। लेकिन यह स्थिति सृष्टि में पूर्व से विद्यमान तत्व के विषय में ही है। इससे यह निष्कर्ष निकाल लेना कि विज्ञान ने स्वयं "जीन्स" की मूल व्युत्पत्ति का आधार या मर्म जान लिया है, किसी प्रकार उपयुक्त नहीं है।

महान सन्त योगानन्द परमहंस ने अपनी द्वितीय विदेश यात्रा काल में संयुक्त राज्य अमेरिका में क्रिसमस पर्व के अवसर पर अपने एक प्रिय शिष्य/भक्त को भेंट स्वरूप चाँदी का एक गिलास प्रदान किया तो शिष्य को सहसा स्मरण हो आया कि अनेक दशाब्दियों पूर्व जब उसने स्वामी विवेकानन्द से शिष्यत्व हेतु दीक्षा के लिए निवेदन किया था तो उन्होंने दयार्द्र होकर उसे आश्वस्त किया था कि उसके उद्धारक गुरू उसे भविष्य में निश्चय ही मिलेंगे। उसके निरन्तर आग्रह पर कि वह उनको कैसे पहचानेगा, स्वामी विवेकानन्द ने उसे बताया था कि उसके वे गुरू उसे किसी समय चाँदी का गिलास भेंट करेंगे। (योगी कथामृत का प्रकरण 47) हम बहुधा ऐसी स्थितियों से दो-चार होते हैं कि डाक्टरों द्वारा किसी रोगी या उसके परिजनों को अन्तिम रूप से कह दिया गया कि उसके बचने की सम्भावनायें निःशेष हैं, लेकिन ईश्वरीय सत्ता के किसी भी रूप के प्रति उसके स्वयं के अथवा उसके स्वजनों के समपर्ण, आस्था व विश्वास ने चमत्कारिक रूप से ऐसे रोगी को पूर्ण स्वथ्य करते हुये मानों एक नवजीवन प्रदान कर दिया। डाक्टरों के ऐसे ही उत्तर पर हृदयरोग के अन्तिम आघात से ग्रस्त एक व्यक्ति, जो महान अवधूत सन्त नित्यानंद का भक्त था, को उसके आग्रह पर जब उसके पुत्र नित्यानंद जी के समक्ष उनके दर्शनार्थ ले गये तो उन्होने उसे पास के पहाड़ पर स्थित एक मन्दिर, जिसमें ढेर सारी सीढ़ियाँ थीं, की मूर्तियों के दर्शन करके आने का निर्देश दिया और फिर जैसे असम्भाव्य घटित हो गया। उस व्यक्ति ने ऐसा ही किया। वह मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ते हुये क्रमशः न केवल पूर्ण स्वस्थ हो गया अपितु उसके बाद पर्याप्तकाल तक उसने स्वस्थ जीवन भी जिया। (भगवान नित्यानन्द से उद्घृत) इस प्रसंग में एकाधिक दृष्टान्तों का उल्लेख निश्चय ही महत्वपूर्ण है जिनके अन्तर्गत अतीत काल से आस्था तथा विश्वास पर चली आ रही मान्यताओं को विज्ञान ने लम्बे समय तक स्वीकार नहीं किया किन्तु जो कालान्तर में वैज्ञानिक तार्किकताओं पर यथार्थ सिद्ध हुयीं। हिन्दू घर्म में आम धारणा है कि उनके ऋषि-मुनि काल-दृष्टा थे और ब्रह्माण्ड के नाना सत्य को वे भली-भाँति रूप से जानते थे लेकिन वे मानव मात्र के अस्थिर चरित्र व व्यवहार की क्षणभंगुरता से भी पूर्णतया अवगत थे। इसीलिये मूल सत्य को सर्वसामान्य के समक्ष घोषित करने के स्थान पर उन्होंने उनको हिन्दू धार्मिक रीति-रिवाजों एवं नित्यप्रति के सामान्य तथा धार्मिक क्रियाकलापों में समाहित कर दिया साथ ही उनको मनुष्य के सामान्य चरित्र में इस प्रकार पिरो दिया कि युग-युगान्तरों तक वह इनसे विमुख न हो सके। इस कड़ी की ही एक साधारण अवधारणा थी कि मनुष्य को दक्षिण दिशा की ओर पैर करके नहीं सोना चाहिये। इस अवधारणा को विज्ञान ने अपनी कसौटी पर दीर्घ काल तक स्वीकार नहीं किया किन्तु अन्ततः चिकित्सा विज्ञान ने अपनी शोध में कुछ समय पूर्व यह सिद्ध पाया कि पृथ्वी की ध्रुवीय व्यवस्था के अधीन मनुष्य द्वारा दक्षिण दिशा की ओर पैर करके शयन करने से उसकी रक्त-संचार व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। हिन्दू अध्यात्म में इसी भाँति स्वर ब्रह्म, नाद ब्रह्म एवं एक निश्चित आरोहावरोह में मंत्रोच्चार की शक्तियों जैसी अवधारणायें भी अनायास नहीं हैं बल्कि वे आदि-काल से साधकों द्वारा अनुभूत किये गये चिर सत्य हैं जिनके बारे में विज्ञान कब या कभी जान सकेगा, यह बता सकने में कदाचित ही कोई सक्षम हो। इसी तरह महान ग्रीक दार्शनिक सुकरात ने ईसा पूर्व जब प्रथम बार यह उद्घोषित किया कि पृथ्वी चपटी नही वरन् गोल हैं और सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा नहीं करता प्रत्युत पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, तो इसे भी लम्बे काल तक वैज्ञानिक दृष्टि से स्वीकार नहीं किया गया या यद्यपि यह

तथ्य कालान्तर में सत्य सिद्ध हुआ। तात्पर्य यह है कि मानव समाज में, विशेषतः भारतवर्ष के हिन्दू समाज में आस्था तथा विश्वास के आधार पर उसकी नित्य प्रति की धार्मिक मान्यताओं, कर्मकाण्डों एवं व्यवहार की जो अनेक परिपाटियाँ व परम्परायें सहस्त्राब्दियों से परिचलन में है, उन्हें मात्र इस कारण नकारे जाने का कोई औचित्य नहीं बनता कि वे अभी वैज्ञानिक कसौटियों पर सिद्ध नहीं हुयी हैं, जब कि वैज्ञानिक सत्यान्वेषणों के क्रम में वे कमी भी सत्य सिद्ध हो सकती हैं। तथापि इसका यह अर्थ भी नहीं है कि आडम्बर पूर्ण रूढ़ियों, परिपाटियों और कुरीतियों को मात्र आस्था अथवा विश्वास के मिथ्या धरातल पर अनावश्यक यूँ ही पोषित किया जाता रहे।

अनेक बार इस प्रकार की बहस या चर्चायें होती हैं कि ब्रह्माण्ड और प्रकृति का सृजन किसने किया है? आत्मा या प्राण तत्व क्या है?, सारे नक्षत्र, तारे व ग्रह/उपग्रह आदि किस प्रकार अपने-अपने चक्र व धुरी पर विनियमित होते हैं? सृष्टि के सृजन व विनाश का कालचक्र कहाँ से नियंत्रित होता है? ईश्वर जैसी अदृश्य सत्ता पर सम्पूर्ण मानव क्यों सदा सर्वदा से विश्वास करता चला आ रहा है एवं क्यों इस विश्वास या उसकी प्रार्थना या उसके प्रति समर्पण मात्र से जीवन में अनहोनी हो जाती है? इत्यादि-इत्यादि के विषय में विज्ञान की क्या स्थिति है और इसी प्रसंग में आस्था तथा विश्वास के जो कतिपय उदाहरण पूर्व में उल्लिखित किये गये हैं, उनको विज्ञान किस दृष्टिकोण से ग्रहण करेगा या स्वीकार कर पायेगा, यह निश्चय ही विचारणीय है।

ऐसे ही ढेरों दृष्टान्त हैं व उपर्युक्त से परे अनेक उदाहरण हैं जिनके अन्तर्गत बहुत कुछ ऐसा घटित हुआ जो सामान्य मानव को अचम्भित करता रहा है। वह निरन्तर उन अनेक स्थितियों का गवाह बना है जहाँ वैज्ञानिक सत्य से परे कहीं किसी अदृश्य सत्ता, पुनर्जन्म, इन्द्रिय जगत, हिन्दू अध्यात्म की अवधारणा के अनुरूप कर्म व प्रारब्ध, चेतन एवं अचेतन संसार व परालौकिक शक्तियों की अनुभूतियों को लोगों ने जीवन्त रूप से अनुभूत किया है और जहाँ विज्ञान की तार्किकता पूर्णतः बेमानी हो जाती है। तब हम समझ पाते हैं कि विज्ञान की क्या सीमायें हैं तथा आस्था, धार्मिक विश्वास, पारमेश्वरी सत्ता की प्रत्यक्षता एवं उसकी विराट निस्सीमता और विशाल महासागर के सापेक्ष उसका अस्तित्व एक रजकण या बूँद के बराबर भी नहीं है। फिर भी, उस सत्ता के सृजन को वह जब-तब हमारे समक्ष लाने में सफल होता रहता है। ऐसे में मानव के साधारण से विश्वास व ईश्वर के प्रति आस्था-जन्य आयामों को उसके द्वारा अपने मापदण्डों से आंकना कितना संगत और प्रासंगिक है, इस पर आप सुधीजन स्वयं मनन एवं विचार करें और अपने-अपने निष्कर्ष निकालें, सम्भवतः यही श्रेयष्कर है और कदाचित इस लेखन का अभीष्ठ भी।

वी० पी० गुप्ता
श्रम सलाहकार

आलू महिमा

हम लोगों के हॉस्टल वन में एक मेस भी है।
इस के बारे में लोगों के कुछ गेस भी हैं।।
कुछ कहते हैं जिस दिन यह प्रारम्भ हुआ तो आलू बरसे।
बस फिर क्या था! हफ्ते भर तक आलू परसे।
जो भी हो आलू बनना, तब से, इस मेस में रूल हो गया।
इसका गर अपवाद मिला, तो समझो मेस से भूल हो गया।
कढ़ी में आलू, सब्जी में आलू, दाल में आलू, आलू की कतरी।
आलू-चाप, आलू-कचालू, तोरई-आलू, अरबी-आलू।
परवल-आलू, पराठे-आलू, गाजर-आलू, अरबी-आलू।
आलू बड़ा, पकौड़ा आलू, बैंगन-आलू, वेफर आलू।
आलू टोमैटो, भिंडी-आलू, दम-आलू और कैबेज आलू।।
कहाँ तलक गिनवा सकता हूँ, एक सौ बीस कॉम्बिनेशन हैं।
तीस दिनों में चार वखत हर एक के लिए फिक्स्ड टाइम है।।
मैस कमेटी में आने का एक अनिवार्य विषय आलू है।
पिछले पाँच साल से इस पर एक रिसर्च चालू है।।
आलू में कुछ नये विटामिन हॉस्टल वन ने प्राप्त किये हैं।
बड़े-बड़े फेमस कुछ आलू प्राइजेज़ में भी दिये गये हैं।।
आप ताज्जुब में होंगे, मेस के सीक्रेट को मैंने कैसे जाना।
मेस सेक्रेट्री को आलू खिलवाये, और प्राप्त कर लिये।

अनूप स्वरूप, पूर्व छात्र
वर्ष 1965-70 में रचित

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ

सदभाव से कार्य करते हुए	Acting in good faith
अनिश्चित काल के लिए स्थगित करना	Adjourn sine die
यथा प्रस्ताव अनुमोदित	Approved as proposed
साधिकार	As of right
परिचालित कर फाइल करें	Circulate and then file
आदेश शीघ्र भेजने की कृपा करें	Early orders are solicited
कार्यवाही में शीघ्रता करें	Expedite action
अनुवर्ती कार्यवाही	Follow up action
अनुमोदन प्रदान कर दिया जाए	Approval may be accorded
पूर्ववर्ती टिप्पणियाँ	Preceding notes
नियमों द्वारा शासित	Governed by the rules
सुगम संदर्भ के लिए प्रतिलिपि संलग्न	Copy enclosed for ready reference

रसानुभूति
(वात्सल्य)

वर दंत की पंगति कुंदकली अधराधर–पल्लव खोलन की।
चपला चमकै घन बीच जगैं छबि मोतिन माल अमोलन की।
घुँघरारि लटैं लटकैं मुख ऊपर कुंडल लोल कपोलन की।
नेवछावर प्रान करैं तुलसी बलि जाऊँ लला इन बोलन की।।

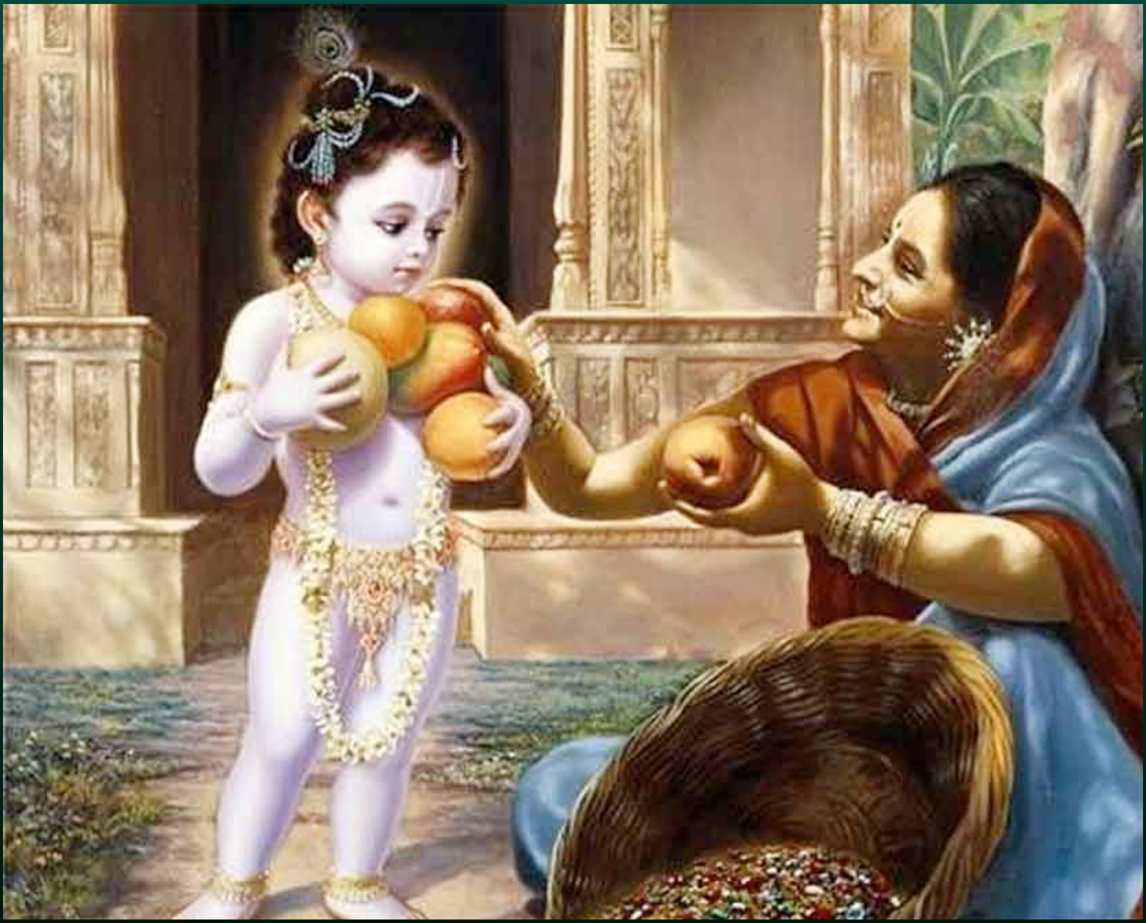

संपर्क
राजभाषा प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष–0512&259&7122, 2596192
ईमेल–arunk@iitk-ac-in, vedps@iitk-ac-in

अभिकल्प-सुनीता सिंह